शून्य के पार
(राजकोट, गुजरात में हुए चार प्रवचन)

प्रवचन-क्रम

1. कर्म, ज्ञान, भक्तिः मन के खेल...2
2. ज्ञानः मार्ग नहीं, भटकन है...18
3. भक्तिः भगवान का स्वप्न-सृजन..35
4. कर्म: सबसे बड़ा भ्रम...50

1

शून्य के पार
पहला प्रवचन

कर्म, ज्ञान, भक्तिः मन के खेल
(6 मार्च 1970 सुबह)

मेरे प्रिय आत्मन्!
अंधेरी रात हो तो सुबह की आशा होती है। आदमी भी एक अंधेरी रात है और उसमें भी सुबह की आशा की जा सकती है। कांटों से भरा हुआ पौधा हो तो उसमें भी फूल लगता है। आदमी भी कांटों से भरा हुआ एक पौधा है, उसमें भी फूल की आशा की जा सकती है। बीज हो तो अंकुरित हो सकता है, विकसित हो सकता है। आदमी भी एक बीज है और उसमें भी विकास के सपने देखे जा सकते हैं।
लेकिन साधारणतः मनुष्य बीज ही रह जाता है और वृक्ष नहीं हो पाता! साधारणतः मनुष्य कांटों से भरा हुआ एक पौधा ही रह जाता है और फूल नहीं खिल पाते! साधारणतः मनुष्य बीज ही रह जाता है और वृक्ष नहीं हो पाता! अंधेरी रात ही रह जाता है और प्रभात कभी नहीं हो पाती! एक सपना ही रह जाता है और सत्य कभी भी नहीं बन पाता!
इसलिए प्रत्येक मनुष्य के सामने सवाल है कि मार्ग क्या है? कैसे हम पहुंचें उस तक, जिसे हो जाने के बाद कुछ और हो जाने की आकांक्षा शेष न रह जाएगी? कैसे उसे पा लें, जिसे पा लेने के बाद फिर कुछ और पाने को शेष नहीं रह जाता? कैसे वह मंदिर मिल जाएगा, जहां हम अपने पूरे स्वरूप को उपलब्ध हो सकेंगे, जो हम होने को पैदा हुए हैं, वह हो सकेंगे? कहां है रास्ता? कौन सा है रास्ता?
सबसे बड़ी कठिनाई जो है, वह यह है कि जीवन आकाश की तरह है, जमीन की तरह नहीं। काश! जीवन जमीन की तरह होता तो महावीर चलते हैं, बुद्ध चलते हैं, कृष्ण चलते हैं, क्राइस्ट चलते हैं, रास्ते बन गए होते, उनके पद-चिह्न बन गए होते। लाखों लोग चले हैं और पहुंचे हैं। पगडंडियां बन गई होतीं। और कोई कारण न था कि हम पक्के रास्ते भी बना लेते उस मंदिर तक!
लेकिन यह नहीं हो सका, क्योंकि जिंदगी आकाश की तरह है, जिसमें पक्षी उड़ते हैं और उनके पद-चिह्न नहीं बनते। पक्षी उड़ जाता है, पीछे कोई चिह्न नहीं छूट जाते। पक्षी पहुंच जाता है, रास्ता नहीं बन पाता। और जब दूसरे पक्षी को उड़ना हो तो फिर नये सिरे से शुरुआत करनी होती है--बंधे हुए रास्ते से नहीं। आकाश फिर खाली का खाली रह जाता है!
यह दुर्भाग्य भी है और सौभाग्य भी। दुर्भाग्य इसलिए कि बंधा हुआ रास्ता नहीं है। सौभाग्य इसलिए कि अगर बंधा हुआ रास्ता होता तो उस मंदिर तक पहुंचने का सारा आनंद नष्ट हो जाता, क्योंकि उस मंदिर तक पहुंचने का जो आनंद है, वह पहुंचने में कम, पहुंचने की यात्रा में ज्यादा है। उस मंदिर का जो सौंदर्य है, वह उस मंदिर तक पहुंचने की खोज से ही पैदा होता है। उस सत्य की जो उपलब्धि है, वह उस सत्य को जन्म देने की जो प्रसव पीड़ा है, उससे ही मिलती है।
तो मेरी दृष्टि में तो दुर्भाग्य ही होता, अगर रास्ता बन जाता, क्योंकि बंधे हुए रास्ते रेल की पटरियों की तरह हमें भी वहां पहुंचा देते--भगवान के द्वार तक, सत्य तक, सौंदर्य तक, प्रेम तक। लेकिन तब वह मंदिर बासा और उधार होता। उसकी ताजगी और नयापन खो गया होता।
परमात्मा की बड़ी कृपा है कि जीवन जमीन की तरह नहीं, आकाश की तरह है, जहां कोई पद-चिह्न नहीं बनते।
लेकिन आदमी मार्ग खोजना चाहता है! कैसे पहुंचे? और जैसे ही कोई सोचना शुरू करता है, उसे दिखाई पड़ने लग जाता है कि जीवन अर्थहीन है! कोई अर्थ नहीं मालूम पड़ता! सब तरफ अंधेरा है, कोई प्रकाश नहीं दिखाई पड़ता! क्यों जी रहे हैं? क्यों पैदा हुए हैं? इसके पीछे भी कोई कारण नहीं दिखाई पड़ता। सब मीनिंगलेस, एब्सर्ड, न कोई अर्थ, न कोई संगति! जो भी सोचता है, उसे ऐसा ही दिखाई पड़ना शुरू होता है। स्वाभाविक ही है कि हम पूछें कि रास्ता है कोई?

तीन रास्तों के संबंध में हजारों साल से आदमी ने विचार किया है। उन तीन रास्तों में दुनिया के सभी रास्ते समाहित हो जाते हैं। उन तीन रास्तों के नाम हमने भी सुन रखे हैं। तीन ही रास्ते क्यों इतने महत्वपूर्ण हो गए? रास्ते होने के कारण? नहीं, आदमी का मन तीन पर्तों में बंटा है, इसलिए आदमी के मन के तीन केंद्र, तीन पर्तें हैं, तीन वर्तुल हैं। अगर आदमी के मन में हम प्रवेश करें तो उसकी पहली परिधि कर्म की है। बिना काम के रहना बहुत मुश्किल है। मन बिना काम के एक क्षण नहीं जीना चाहता! इसलिए अगर कोई काम न हो तो आदमी बेकार काम खोज लेता है! कभी मैं देखता हूं, सफर में मेरे साथ--एक ही यात्री मेरे साथ होता है। तो मैं देखता हूं जिस अखबार को वह दो दफे पढ़ चुका है, उसे फिर तीसरी बार पढ़ना शुरू कर दिया! उस अखबार को वह दो बार पढ़ चुका है, वह तीसरी बार उस अखबार को क्यों पढ़ रहा है? मन बिना काम के एक क्षण नहीं जी सकता। मन को काम चाहिए।
यद्यपि हम सभी सोचते हैं कि काम से मुक्ति हो जाए तो कितना अच्छा हो। लेकिन अगर काम से मुक्ति हो जाए तो हम जितनी परेशानी में पड़ेंगे, उतनी परेशानी हमें काम में कभी भी नहीं थी। फिर हमें, व्यर्थ काम खोजने पड़ेंगे। आदमी ताश खेलेगा और अगर कोई दूसरा खेलने वाला न मिले तो आदमी अकेला भी ताश खेलता है-दोनों तरफ से चलता है! वह विरोधी की तरफ से भी पत्ते चलता है, अपनी तरफ से भी पत्ते चलता है! उस विरोधी की तरफ से, जो है ही नहीं! कोई काम चाहिए।
मन की पहली बाहर की जो परिधि है, वह कर्म की मांग करती है कि काम दो। इसलिए एक रास्ता कर्म का रास्ता बन गया है। वह मन की मांग है। तो हमने रिचुअल पैदा किया है, कर्मकांड पैदा किया है--पूजा है, तपश्चर्या है, आसन हैं, योग है! हमने पच्चीस तरह के काम विकसित किए हैं, परमात्मा तक पहुंचने के लिए! लेकिन कोई काम परमात्मा तक नहीं पहुंचा सकता, क्योंकि सब काम मन की आकांक्षाओं की तृप्ति करते हैं-सब काम! और मन के ऊपर उठे बिना कोई सत्य तक नहीं पहुंच सकता, न प्रभु तक पहुंच सकता है। मन कहता है-काम चाहिए!
हमने कहानियां सुनी हैं अगर कोई भूत-प्रेत की दोस्ती बना ले तो वह काम मांगता है। उसे काम चाहिए। मैंने सुना है एक आदमी ने एक प्रेत को जगा लिया था। उस प्रेत ने जगते समय उससे एक शर्त कर ली थी--मुझे काम चाहिए, मैं बिना काम के न रह सकूंगा। अगर कहीं प्रेत होते हैं तो जरूर उसने यह शर्त की होगी, क्योंकि प्रेत के पास शरीर नहीं रह जाता, सिर्फ मन ही रह जाता है। उसे काम चाहिए। विश्राम की उसे जरूरत ही ना रही।
शरीर को विश्राम भी चाहिए, मन को विश्राम की जरूरत ही नहीं। इसलिए जब शरीर भी सो जाता है रात, तब भी मन सपनों में काम करता रहता है। सपने मन के काम की दुनिया है। जब शरीर भी थक कर गिर पड़ा है, तब भी मन थकता नहीं! वह तब सपने देखना शुरू कर देता है। और जो काम दिन में न किए हों, उनको रात सपने में कर लेता है!
आदमी के रात के सपने देखकर हम बता सकते हैं कि इस आदमी ने दिन में किन-किन कामों से अपने को रोका। अगर किसी ने उपवास किया है तो उसके सपने से पता चल जाएगा, क्योंकि रात वह भोजन करेगा। और अगर किसी ने संयम साधा है तो रात वह भोग करेगा। और किसी ने अगर दिन में क्रोध रोका है तो रात वह क्रोध कर लेगा। जब शरीर विश्राम करेगा, तब मन ने जो-जो मांगें दिन में की थीं और किन्हीं कारणों से रुक गई थीं, उन्हें हम पूरा करते हैं।
प्रेत के पास सिर्फ मन ही है। उसने अगर मांग की हो तो कोई आश्चर्य नहीं! उसने कहा, मुझे काम चाहिए। जिस आदमी ने जगाया था प्रेत को, उसने कहा, काम के लिए ही तो हम तुम्हें जगा रहे हैं, काम हम बहुत देंगे। लेकिन काम बहुत जल्दी चुक गए, क्योंकि प्रेत क्षण भर में काम कर लाया! उसने फिर आकर मांग की कि काम दो। सांझ होते-होते वह आदमी घबड़ा गया, क्योंकि कोई काम बचा नहीं!
हम भी घबरा जाएंगे, अगर कोई काम न बचे।
हम भी घबरा जाएंगे, अगर कोई काम न बचे। प्रेत भी मुश्किल में पड़ गया! उसने कहा, मुझे जगा लिया! मैं सोता था तो ठीक था, अब जाग कर मुझे काम चाहिए।
अब वह आदमी घबड़ा गया, क्योंकि उसके पास काम न था।

उसने कहा ठहरो, गांव में एक फकीर है, मैं उससे पूछ आता हूं। जब भी मैं मुश्किल में पड़ जाता हूं, उसने मेरी सहायता की है। आज एक नई तरह की मुश्किल पड़ गई। अब तक हमेशा यही मुश्किल थी कि कोई काम कैसे हल हो। आज यह एक मुसीबत हो गई कि बेकाम कैसे रहा जाए?
आज अमरीका उस हालत में पहुंच रहा है। टेक्नालॉजी ने एक प्रेत जगा लिया है, जो आदमी को काम से मुक्त कर देगा। अमरीका का विचारक, एक ही परेशानी में है आज, वह यह कि बीस-पच्चीस साल में टेक्नालॉजी हर आदमी को काम से छुटकारा दिला देगी, फिर क्या होगा? आदमी कहेगा, काम दो। काम हमारे पास नहीं होगा। हम कहेंगे भोजन लो, कपड़े लो, मकान लो, लेकिन काम मत मांगो! जो आदमी राजी हो जाएगा कि हम काम नहीं करेंगे, उसको ज्यादा तनख्वाह मिल सकेगी! पच्चीस साल बाद--बजाय उस आदमी के जो कहेगा, हमको तो काम चाहिए ही, उसको कम तनख्वाह देनी पड़ेगी, क्योंकि वह काम भी मांगता है और तनख्वाह भी मांगता है! दोनों बातें नहीं दी जा सकतीं।
वही मुसीबत उस आदमी के सामने खड़ी हो गई थी, वह फकीर के पास गया। उसने फकीर से पूछा कि मैं बहुत मुश्किल में पड़ गया हूं। एक प्रेत को सुबह मैंने जगा लिया, सांझ होते-होते सारे काम चुक गए हैं। अब काम मेरे पास नहीं है और वह मेरी जान लिए लेता है?
उस फकीर ने कहा, तुम एक काम करो। वह सामने एक बर्तन पड़ा हुआ है, वह ले जाओ। उसने कहा, मैं क्या करूंगा? उसने कहा, उस प्रेत को कहना, इसको भरते रहो। उस बर्तन में पेंदी नहीं थी! वह बाटमलेस था।
और उसने कहा, इस बर्तन में तो पेंदी नहीं है, वह बेचारा भरेगा कैसे?
तो उस फकीर ने कहा, अगर वह भर लेगा तो फिर मुसीबत शुरू हो जाएगी। तुम उसे भरने दो, यह बर्तन कभी भरेगा नहीं। और वह भरता रहेगा और भरता रहेगा और उसे काम मिलता रहेगा। वह उस बर्तन को ले आया, उस प्रेत को दे दिया। तब से प्रेत ने दुबारा लौटकर उससे नहीं कहा कि काम चाहिए, क्योंकि वह काम अभी पूरा नहीं हुआ!
जब आदमी के पास कोई काम नहीं रह जाता तो वह इस तरह के काम चुन लेता है,
जो कभी पूरे नहीं होते! वह इस तरह के बर्तन भरने लगता है, जो कभी पूरे नहीं होते!
इसलिए जैसे ही किसी आदमी के जीवन की सामान्य जरूरतें पूरी हो जाएं, उसके सामने सबसे बड़ा सवाल होता है कि वह कोई ऐसा बर्तन ले आए, जो कभी पूरा न हो। वह पदों की दौड़ में लग जाए, वह कभी पूरी न होगी। वह किसी ही बड़े पद पर पहुंच जाए, आगे और पद होगा। उस बर्तन के नीचे पेंदी नहीं है। वह धन की दौड़ में लग जाएगा, वह कितना ही धन कमा ले, तब भी गरीब रहेगा, क्योंकि आगे और धन कमाने को सदा शेष है।
एंड्रू कार्नेगी मरा, अमरीका का एक अरबपति। मरते वक्त उसके पास दस अरब रुपये थे, लेकिन मरते वक्त बहुत उदास था! तो उसके मित्र ने उससे पूछा कि तुम्हें उदास नहीं होना चाहिए, तुमने तो जीवन में जो चाहा था, वह पा लिया। शायद पृथ्वी के तुम सबसे अमीर आदमी हो। दस अरब रुपये तुम छोड़ कर जा रहे हो।
एंड्रू कार्नेगी ने कहा, मत करो ये बातें, मेरे चित्त को दुखाओ मत। सिर्फ दस अरब से मन बड़ा दुखता है। मेरे इरादे सौ अरब रुपये छोड़ने के थे! यह तो मौत करीब आ गई। मैं एक गरीब आदमी मर रहा हूं, क्योंकि सौ की मेरी इच्छा थी और दस ही कुल कमा पाया! नब्बे के हिसाब से गरीब हूं! नब्बे अरब रुपये मेरे पास नहीं हैं, जो होने चाहिए थे!
और ध्यान रहे, उसको अगर सौ अरब भी मिल जाते तो कोई फर्क नहीं पड़ता था। क्योंकि संख्या चुक नहीं जाती सौ पर, संख्या आगे बढ़ जाती। हजार अरब हो जाते, लाख अरब हो जाते!
कितना ही मिल जाए तो भी कोई फर्क नहीं पड़ता। धन और पद और यश की दौड़ आदमी खोज लेता है! जैसे ही उसकी काम की दुनिया पूरी हुई, फिर वह ऐसे काम चुन लेता है, जिसमें पेंदी नहीं होती। फिर वह भरता चला जाता है। फिर वह छोटे मिनिस्टर से बड़ा मिनिस्टर होता है! फिर वह बड़े मिनिस्टर से दिल्ली की तरफ

जाता है! फिर वह और बड़ा होता जाता है। और वह दौड़ अंतहीन है। उस दौड़ का कोई अंत नहीं है। यह सारी दौड़ आदमी चुनता इसलिए है कि उसके मन को काम चाहिए। मन कहता है, काम न मिलेगा तो हम मर जाएंगे। और जिसे सत्य को खोजना हो, उसे सत्य के खोजने के लिए मन का मर जाना जरूरी है। कि मन मर ही जाए, क्योंकि जो मर सकता है, वह सत्य नहीं हो सकता। मन के मर जाने के बाद भी जो शेष रह जाता है, और नहीं मरता है, वही सत्य है। अमृत भी है हमारे भीतर।
लेकिन मरण से भरा हुआ मन अपने को बचाने के लिए काम की मांग करता रहता है!
तो एक तो मार्ग कर्म का खोजा है लोगों ने। धार्मिक कर्म कहेंगे उसे-- रिचुअल है, क्रियाकांड है! एक आदमी हवन कर रहा है, एक आदमी माला फेर रहा है! एक आदमी भगवान के सामने आरती घुमा रहा है! यह पुराना रिचुअल था, पुराना क्रियाकांड था--यज्ञ थे, हवन थे, पूजा थी, पाठ था। ये क्रियाएं थीं, जिनसे आदमी सोचता था सत्य को पा लेंगे, आनंद को पा लेंगे!
लेकिन क्रियाओं से कभी सत्य नहीं पाया जा सकता। क्योंकि क्रियाओं से सिर्फ मन ही तृप्त होता है और कुछ तृप्त नहीं होता। यह पुराने कर्म की दुनिया थी। लेकिन पुराने कर्म से आदमी ऊब जाता है। सब काम ऊबा देते हैं। फिर वह नये कर्म खोजता है! सेवा नया कर्म है, नया रिचुअल है।
एक आदमी कहता है, गरीब की सेवा करने से सत्य मिल जाएगा! एक आदमी कहता है, कोढ़ी के हाथ-पैर दबाने से सत्य मिल जाएगा! एक आदमी कहता है, भूखे को रोटी देने से सत्य मिल जाएगा! नहीं, भूखे को रोटी देना बहुत अच्छा है, कोढ़ी के पैर दबा देना भी बहुत अच्छा है, और गरीब की सेवा करना भी बहुत अच्छा है, लेकिन सत्य नहीं मिल जाएगा। कोढ़ी को नहीं मिल गया तो उसके पैर दबाने से आपको कैसे मिल जाएगा? नहीं तो कोढ़ी को तो मिल ही गया होता।
उसने तो आपसे बड़ा काम किया है। अच्छा काम है, पुराने रिचुअल से बेहतर है, पुराने क्रियाकांड से बेहतर है। वह बिल्कुल व्यर्थ था। एक पत्थर की मूर्ति के सामने एक आदमी थाली घुमा रहा है! वह बिल्कुल पागलपन की बात थी। अब कम से कम थाली एक भूखे के सामने आप ले गए हैं। इसमें कुछ समझदारी है। लेकिन सत्य इससे नहीं मिल जाएगा। क्योंकि मन काम की मांग कर रहा है, वह इससे भी अपनी तृप्ति पा लेगा।
इसलिए जितने लोग सेवा करते दिखाई पड़ते हैं, अगर इनको सेवा से रोका जाए
तो ये पागल हो जाएं। कोई पदयात्रा कर रहा है! उसे अगर रोक लो तो वह मुश्किल में पड़ जाए। पदयात्रा करके वह जो काम करने का पागलपन उसके सिर पर सवार है, वह उसको निकाले चला जा रहा है। अगर दुनिया में कोई गरीब न हो, और दुनिया में अगर कोढ़ी न हो तो कुछ लोग बड़ी मुश्किल में पड़ जाएं, क्योंकि वे किसकी सेवा करें? उनको बहुत मुश्किल हो जाए, उनको बहुत कठिनाई हो जाए।
मैंने सुना है, एक आदमी अपने बेटे को समझा रहा था कि भगवान ने तुम्हें इसलिए बनाया है कि तुम सबकी सेवा करो। उस बेटे ने कहा, यह मैं समझ गया, लेकिन भगवान ने दूसरों को किसलिए बनाया है? मेरी सेवा के लिए? या बस इसलिए बनाया है कि दूसरे उनकी सेवा करें?
उस बेटे ने बाप को मुश्किल में डाल दिया। जब तक बेटे सवाल नहीं करते, तभी तक बाप मुश्किल के बाहर हैं। जब वे सवाल करने लगते हैं, तब मुश्किल शुरू हो जाने वाली है।
उस बेटे ने यह पूछा कि यह तो मैं समझ गया कि मुझे इसलिए बनाया है कि मैं दूसरे की सेवा करूं, लेकिन दूसरों को किसलिए बनाया है? मेरी सेवा के लिए? और अगर सबको ही सेवा के लिए बनाया है तो सेवा किसकी की जाए?
और अगर सेवा करना पुण्य है तो सेवा करवाना पाप हो जाए! और जो पुण्य किसी के पाप करने पर निर्भर रहता हो, वह पुण्य कैसे हो सकता है? पुराना क्रियाकांड तो समाप्त हुआ है, नये क्रियाकांड पैदा हुए हैं।
लेकिन कर्म की पकड़ की जो हमारी वृत्ति है, वह वृत्ति मन की एक बहुत गहरी जरूरत से पैदा होती है। इसलिए एक तरह के मार्ग हैं, जो कर्म पर जोर देते हैं। और हमारे बीच जो एक्सट्रोवर्ट, बहिर्मुखी व्यक्तित्व हैं, जो भीतर की तरफ नहीं देख सकते, बाहर की तरफ ही देख सकते हैं। जिनकी जिंदगी

बाहर की तरफ जीने में ही जी जा सकती है, उन सारे लोगों के लिए कर्म का रास्ता बड़ा ही अपीलिंग, बड़ा आकर्षक प्रतीत होता है!
सेवा करने वाले लोग, हवन करने वाले लोग, यज्ञ करने वाले लोग एक्सट्रोवर्ट हैं, बहिर्मुखी हैं। वे भीतर नहीं देख सकते। उनकी आंखें बाहर की तरफ ही देख सकती हैं, उन्हें बाहर की तरफ कुछ चाहिए। बाहर कुछ होता रहे तो ठीक है। अगर बाहर कुछ न हो तो बहुत मुश्किल में पड़ जाएंगे, क्योंकि भीतर जाने की उनकी वृत्ति नहीं है। जो बहिर्मुखी है, उन्होंने कर्मयोग जैसी धारणाओं को विकसित किया है!
दूसरे, मन की जो भीतर की--कर्म के बाद की, जो पर्त है, वह विचार की पर्त है। आदमी पूरे समय विचार कर रहा है, सोच रहा है, चिंतन कर रहा है। वह भी मन की एक जरूरत है। मन बिना सोचे भी जिंदा नहीं रह सकता; विचार चाहिए! ज्ञानयोग या ज्ञान का जो मार्ग है, वह मन की दूसरी जरूरत की पूर्ति है। शास्त्र हैं, वेद हैं, कुरान है, बाइबिल है; गुरु हैं, ज्ञानी हैं। उन सबसे इकट्ठा करो विचारों को और उनकी जुगाली करो! मन कहता है, पूरे समय जुगाली करते रहो। कुछ न कुछ सोचते ही रहो, खाली मत हो जाना, क्योंकि मन अगर एक क्षण भी सोचने से मुक्त हो जाए, एक क्षण भी सोचना बंद हो जाए तो वह अंतराल पैदा हो जाता है, जहां से मन के बाहर निकलने का द्वार है। इसलिए मन एक क्षण भी सोचने के बाहर नहीं जाने देता।
अगर आप यह भी कहें कि नहीं, मुझे सोचने से बाहर जाना है। तो वह कहेगा,
इस संबंध में सोचो कि सोचने के बाहर कैसे जाया जा सकता है? लेकिन सोचते रहो! निर्विचार होना है तो चलो निर्विचार के संबंध में विचार करें! लेकिन विचार जारी रहे, विचार को बंद नहीं करना है!
अगर धन के संबंध में सोच से ऊब गए हों तो धर्म के संबंध में सोचो! अगर पृथ्वी अब आकर्षक नहीं मालूम होती तो स्वर्ग के संबंध में सोचो। अगर आदमी का चेहरा अब बहुत सोचने जैसा मालूम नहीं पड़ता तो अपने मन के चेहरे बनाओ-- भगवान के--कृष्ण के, राम के, बुद्ध के! उनके संबंध में सोचो! लेकिन सोचना जारी रखो! सोचना मत छोड़ देना। मन कहता है, बिना सोचे रहा ही नहीं जा सकता। तो जो लोग कर्म से बचना चाहें, उनके लिए मन सोचने का मार्ग देता है। वह कर्म में जितनी हमारी ऊर्जा व्यय होती है, वह सब सोचने में लगा देता है। इसलिए कर्म करने वाले लोग बहुत सोचने वाले लोग नहीं होते, बहुत सोचने वाले लोग कर्म करने वाले लोग नहीं होते।
विचारक अक्सर कर्म की दुनिया का आदमी नहीं होता कर्म की दुनिया के लोग अक्सर विचारक नहीं होते, क्योंकि ऊर्जा हमारे पास सीमित है, एनर्जी सीमित है। अगर वह कर्म में लग जाए तो विचार की तरफ प्रवाहित नहीं हो पाती। अगर विचार में प्रवाहित हो जाए तो कर्म की तरफ प्रवाहित नहीं हो पाती। लेकिन मन का काम पूरा हो जाता है, क्योंकि विचार भी बहुत सूक्ष्म अर्थों में कर्म का ही एक रूप है, वह भी काम है, वह भी एक सूक्ष्म क्रिया है।
आदमी धन के लिए सोच रहा है, मकान के लिए सोच रहा है, मित्रों के लिए सोच रहा है, संबंधियों के लिए सोच रहा है। फिर इससे ऊब जाता है तो परमात्मा के लिए सोचता है, आत्मा के लिए सोचता है, मोक्ष के लिए सोचता है! सोचना जारी रहता है!
और ध्यान रहे, मन की इस दूसरी जरूरत को पूरा करने के लिए ज्ञानयोग है।
वह कोई मार्ग नहीं है सत्य का। वह मन का ही भोजन है, वह मन की ही तृप्ति का एक रास्ता है। उससे भी कभी कोई कहीं नहीं पहुंचा है। हां, मन लंबी यात्रा पर भटका देता है।
ये जो मार्ग पैदा हुए हैं, ये मार्ग कोई सत्य तक पहुंचने से पैदा नहीं हुए हैं। ये हमारे मन की आकांक्षाएं हैं, जिनकी तृप्ति के लिए हमने ईजाद किए हैं।
न तो कर्म से कोई कभी पहुंचा है, न ज्ञान से कभी कोई पहुंचा है।
लेकिन ज्ञान का काफी प्रभाव है। क्योंकि यह तो हमारी समझ में भी आ जाए
कि कर्म से कैसे पहुंचेंगे? अगर एक आदमी माला फेर रहा है तो माला फेरने से कैसे पहुंच जाएगा। कितनी ही फेरे माला, माला फेरने से कैसे पहुंचेगा? और

एक आदमी अगर पूजा का थाल लिए भगवान के सामने आरती कर रहा है तो वह कैसे पहुंचेगा? यह हमारी समझ में भी आ जाए।
लेकिन यह हमारी समझ में और भी आना कठिन होता है कि विचार से भी नहीं पहुंचेगा। इसे थोड़ा सोच लेना जरूरी है। विचार कर क्या सकता है? जिसे हम नहीं जानते हैं, विचार उसके संबंध में सोच नहीं सकता। जिसे हम जानते ही हैं, उसी के संबंध में सिर्फ सोच सकता है।
विचार नये के संबंध में कुछ भी नहीं सोच सकता। अज्ञात, अननोन के संबंध में विचार की कोई उड़ान नहीं। आपने कभी कोई चीज सोची है, जो आप जानते ही नहीं? आप सोच ही नहीं सकते। शायद आप कहेंगे; हां, मैं एक ऐसा घोड़ा सोच सकता हूं, जो सोने का बना है, जिसके पंख हैं जो आकाश में उड़ता है। सोच सकते हैं, लेकिन यह कोई नई बात न हुई। सिर्फ पांच-छह पुरानी बातों का जोड़ हुआ। आपने पंख से उड़ते हुए पक्षी देखे हैं, सोना देखा है, घोड़ा देखा है, तीनों को जोड़ सकते हैं। सोने का घोड़ा बना सकते हैं विचार से। पंख लगा सकते हैं, उड़ा सकते हैं। लेकिन यह तीन पुरानी बासी चीजों का जोड़ है। इसमें नया कुछ भी नहीं है।
विचार नये को सोच ही नहीं सकता, विचार मात्र बासा होता है, बारोड, उधार होता है।
मौलिक विचार जैसी कोई चीज होती ही नहीं, जिसको हम कहते हैं ओरिजिनल थॉट, ऐसी कोई चीज होती ही नहीं। कोई विचार मौलिक नहीं होता, हो ही नहीं सकता। विचार मौलिक होने का उपाय ही नहीं है। विचार सदा बासा होता है, कहीं से लिया होता है। हां, दस-पांच विचारों को तोड़ कर आप नया संयोग बना सकते हैं। वह नया संयोग आपको सत्य तक ले जाने वाला नहीं है।
सत्य है अज्ञात, अनजान, अपरिचित। उसे विचार से कैसे जानिएगा? जिसका मुझे पता ही नहीं, उसे मैं सोचूंगा कैसे? उसे सोचने का उपाय नहीं। सत्य को सोचा नहीं जा सकता।
लेकिन लोग बैठे हैं, आंखें बंद करके! वे कहते हैं, हम सत्य का विचार करते हैं! विचार कर रहे होंगे। सत्य का नहीं हो सकता कोई विचार। जब सब विचार क्षीण हो जाते हैं, तब जो शेष रह जाता है, वह सत्य है। विचार की दीवार भी सत्य से नहीं जुड़ने देती। चाहे वे विचार हमने किसी शास्त्र से लिए हों, चाहे वे विचार किसी गुरु से लिए हों, चाहे वे विचार हमने अपने जीवन के अनुभव से ही इकट्ठे किए हों। लेकिन विचार की जो पर्त है, वह भी हमारे और सत्य के बीच बुनियादी बाधा है।
लेकिन ज्ञानी कर्म की निंदा करेंगे। वे कहेंगे, क्या होगा कर्म से? सोचो। सोचना भी कर्म का सूक्ष्म रूप है। असल में कर्म में और सोचने में फर्क क्या है? कर्म में शरीर भागीदार होता है। सोचने में सिर्फ मन भागीदार होता है। सोचना मन का कर्म है। एक काम में अगर आप शरीर का उपयोग करें तो वह कर्म हो जाएगा। और अगर सिर्फ मन का उपयोग करें तो वह सोचना और विचारना हो जाएगा। मैं भोजन करूं और शरीर का उपयोग करूं तो कर्म हो जाएगा। और मैं आंख बंद करके भोजन का विचार करूं तो वह विचार हो जाएगा। वह भी कर्म है--सिर्फ मानसिक कर्म।
जिसे हम ज्ञानयोग कहते हैं, वह कहां ले जा सकता है? कहीं भी नहीं ले जा सकता। वह मन की एक गहरी पर्त को तृप्त कर देता है। इसलिए दूसरा रास्ता ज्ञानयोग का रहा, लेकिन वह भी रास्ता नहीं है।
तीसरा रास्ता है, भाव का। वह मन की केंद्रीय ताकत है। इमोशनल, वह सबसे गहरा है।
कर्म सबसे ऊपर है, उसके बाद विचार है, उसके बाद भाव है।
भाव अति सूक्ष्म है। भाव को पहचानना ही मुश्किल होता है। जब तक वह विचार न बन जाए, हम उसको पहचान भी नहीं पाते। और जब तक वह कर्म न बन जाए, तब तक दूसरे नहीं पहचान पाते। भाव जब विचार बनता है तो हम पहचान पाते हैं। और भाव जब कर्म बन जाता है, तब दूसरे पहचान पाते हैं। भाव अति सूक्ष्म मन है। तो कुछ लोग कहते हैं, नहीं विचार से नहीं होगा, तर्क से नहीं होगा, सोचने से नहीं होगा; वह भावना से होगा, भक्ति से होगा। वे कहते हैं--सोचना भी छोड़ो, कर्म भी छोड़ो, भाव में लीन हो जाओ।

लेकिन भाव भी मन की ही गहरी पर्त है। चाहे वह भाव प्रेम का हो, चाहे वह भाव क्रोध का हो; चाहे वह भाव मित्रता का हो, चाहे शत्रुता का हो; चाहे वह भाव समर्पण का हो। भाव भी मेरे मन की भाव-दशा है। मेरा ही मन भाव कर रहा है। ये जो भाव हैं, इनसे भक्ति का जन्म हुआ है कि हम भाव करें। भाव करके हम इल्यूजंस पैदा कर सकते हैं, भाव करके हम बड़े भ्रम पैदा कर सकते हैं। भाव से हम जो चाहें, वह सपना भीतर सच मालूम हो सकता है।
भाव की बड़ी शक्ति है। अगर कोई पूरे मन से भाव करे, तो जो भी भाव करेगा, वही हो जाएगा।
हिप्नोसिस में, सम्मोहन में यही हो रहा है। अगर एक आदमी को सम्मोहित करके कहा गया है कि अब तुम आदमी नहीं रहे, तुम कुत्ते हो गए हो! सम्मोहन की अवस्था में उसका कर्म भी बंद हो गया है, विचार भी बंद हो गया है, सिर्फ भाव रह गया है। विचार थोड़ी-बहुत बाधा डाल सकता है। विचार कह सकता है कि कौन कहता है कि मैं कुत्ता हो गया हूं, मैं आदमी हूं। लेकिन विचार भी सुला दिया गया है। अब सिर्फ भाव रह गया है।
भाव बिल्कुल अंधा है। अगर एक आदमी के मन में सिर्फ भाव रह गया है और उसे यह सुझाव दिया जाए कि तुम कुत्ते हो। और फिर उस आदमी से कहा जाए, बोलो, तो वह बोलेगा नहीं, वह भौंकना शुरू कर देगा! क्योंकि उसने पकड़ लिया कि वह कुत्ता हो गया है!
अभी एक युनिवर्सिटी में, अमरीका में, एक बहुत अदभुत घटना घट गई। और उस घटना के बाद अमरीका में सम्मोहन के ऊपर कानूनी पाबंदी लगानी पड़ी। चार विद्यार्थी एक होस्टल में हिप्नोटिज्म पर एक किताब पढ़ रहे थे। सम्मोहन के ऊपर एक किताब पढ़ रहे थे। किताब में उन्होंने पढ़ा कि जिस तरह का भाव किया जाए, वही हो सकता है। तो उन चार में से एक ने तय कि यह असंभव है, यह हो नहीं सकता। फिर भी प्रयोग करके देखा जाए। एक युवक को उन्होंने कमरे में लिटा कर, दरवाजे बंद करके, तीन ने उसको सुझाव देने, सजेशन देने शुरू किए कि तुम बेहोश हो गए हो, तुम बेहोश हो गए हो। वे आधे घंटे तक उसको सुझाव देते रहे! धीरे-धीरे, उन्होंने देखा कि वह जो युवक बेहोश हो गया! मजाक में ही एक ने उनमें से कहा, कि ठीक है, बेहोशी तो आ गई। एक ने मजाक में--उससे कहा कि तुम मर गए हो! वह युवक वापस नहीं लौटा! उसकी सांस बंद हो गई!
वह मुकदमा चला, लेकिन वह अनजाने में अपराध हो गया था, उनमें से कोई भी उसे मारना नहीं चाहता था। लेकिन अगर पूरा मन जोर से इस बात को पकड़ ले कि मैं मर गया हूं तो इस दुनिया में कोई ताकत नहीं बचा सकती। भाव अगर इतना तीव्र हो जाए तो शरीर से तत्काल संबंध छूट जाएगा। भाव की बड़ी शक्ति है, लेकिन भाव मन की शक्ति है। तो अगर भाव के हम प्रयोग करना चाहें तो बहुत प्रयोग कर सकते हैं।
एक क्राइस्ट का भक्त क्राइस्ट को देख सकता है। यूरोप में ईसाई फकीर हैं, आज भी जिंदा हैं, जिनके शरीर पर स्टिगमैटा है। जीसस को सूली लगी थी तो हाथ में कीलें ठोके गए थे और आज शुक्रवार के दिन ही ठोके गए थे। शुक्रवार के दिन आज भी यूरोप में ऐसे फकीर हैं, जो ऐसे हाथ फैला कर बैठे रहते हैं! हजारों लोग देखने इकट्ठे होते हैं। जिस समय कीले ठोके गए थे जीसस के हाथ में, उस समय उनके हाथ में अपने आप छेद हो जाता है, खून बहना शुरू हो जाता है! वे इतना तादात्म्य कर लेते हैं, भाव में जीसस के साथ एक हो जाते हैं और तब वे ऐसा नहीं सोचते कि जीसस को सूली लग रही है, तब वैसा सोचते हैं कि मुझे सूली लग रही है, और मैं रहा मरियम का बेटा जीसस! मेरे हाथ में कीले ठोक दिए गए।
और अगर पूरे भाव से यह बात सोच ली जाए तो हाथ में कीले ठुक गए! लोग अंगारे पर चल लेते हैं! वह सिर्फ भाव की बात है। अगर भाव ने पूरा पक्का तय कर लिया कि आग नहीं लगी थी तो बहुत कठिन है आग का लग जाना।
भाव अगर तीव्रता से कुछ बात ग्रहण कर ले तो वह संभव है। लेकिन वह हमारा ही पैदा किया हुआ है, हमारे ही मन का प्रोजेक्शन है। वह हमने ही पैदा किया हुआ है।

कृष्ण के दर्शन हो सकते हैं, बांसुरी बजाते कृष्ण के साथ खेल भी हो सकता है, लीला भी हो सकती है! नहीं, लेकिन वह कृष्ण, हमारे ही मन का प्रतिबिंब है, हमारे ही भाव का।
इसलिए भक्त जो है, भक्ति पर चलने वाला जो आदमी है; उस मार्ग को पकड़ने में जो लगा है, वह कहेगा, संदेह मत करना। क्योंकि संदेह किया तो भाव पूरा नहीं हो सकेगा। वह कहेगा, विचार मत करना, क्योंकि विचार अगर किया तो विरोधी विचार भी हो सकता है। वह कहेगा, अपने को पूरी तरह समर्पण कर दो भगवान के लिए!
और भगवान कौन? वह भी मेरे मन का भाव है। भगवान का ही पता होता, तब तो ठीक था। उसका ही तो पता नहीं। अपने ही मन के एक भाव के प्रति पूरा समर्पण कर दो! फिर जैसी हमारी कल्पना होगी, वैसा होना शुरू हो जाएगा।
तुलसी ने कहा है कि जिसने जैसी उसकी मूर्ति की कल्पना की, वैसे ही उसके दर्शन मिले। उसके दर्शन नहीं मिले--जिसने उसकी जैसी कल्पना की! अपनी ही कल्पना के दर्शन कर लिए! हम अपनी कल्पना के दर्शन कर सकते हैं। लेकिन कल्पना का दर्शन सत्य तक ले जाने वाला नहीं।
इसलिए जो जितना कल्पना में प्रगाढ़ होगा, उतना भक्ति के रास्ते पर आसानी हो सकती है। पुरुष के बजाय स्त्री को ज्यादा आसानी हो सकती है। इसलिए मंदिरों में, भजन-कीर्तन में पुरुष की बजाय स्त्री की भीड़भाड़ है! उसका कारण है, उसके पास भाव की शक्ति ज्यादा तीव्र है। इसलिए आज की दुनिया के बजाय दो हजार साल पहले भक्ति ज्यादा आसान थी, क्योंकि भाव ज्यादा सुलभ था और दस हजार साल पहले और आसान था।
आज से दस हजार साल पहले देवी-देवताओं को बहुत दूर नहीं रहना पड़ता था, वहीं जमीन पर रहे आते थे! अब उनको बहुत दूर रहना पड़ता है, क्योंकि आदमी बहुत सोच-विचार करने लगा है और उनके और आदमी के बीच फासला हो गया है। बराबर देवी-देवता उतर कर, उनको चढ़ाया गया भोजन ग्रहण कर लेते थे! बातचीत भी होती थी! तालमेल भी होता था! देवताओं से आदमियों की स्त्रियों का प्रेम भी हो जाता था, बच्चे भी हो जाते थे, वह सब होता था!
देवता बहुत पास थे, क्योंकि आदमी के पास तर्क बहुत कम था, भाव बहुत था। भाव इतना था कि किसी भी तरह के देवता को निर्माण करने की क्षमता आदमी के पास थी। वह क्षमता चली गई। नुकसान नहीं हुआ, क्योंकि वे देवता हमारी कल्पनाओं से ज्यादा न थे। वे देवता दिवा-स्वप्न थे, डे-ड्रीम्स थे, जो हमने ही देखे थे! इसलिए वे खो गए। वे हमारे सपने थे। हम जाग गए वे खो गए।
आने वाली दुनिया में भक्त की बचने की बहुत कम संभावना है, क्योंकि भाव
अब बिना तर्क के जिंदा नहीं रह पाता तर्क बीच में खड़ा हो जाता है। वह तर्क बीच में खड़ा हो जाता है, तो भाव पूरा नहीं हो पाता है। कल्पना टूट जाती है। अगर इतना भी शक आ जाए कि कहीं यह मेरी कल्पना तो नहीं है तो यह सब गया--बात खत्म हो गई। इतना शक भी आ जाने से भाव विदा हो जाएगा।
भाव पूरी मांग करता है। वह कहता है, पूरा दे दो अपने को। जरा भी, इंच भर
भी बचाना मत, पूरा अपने को दे देना। लेकिन न तो भाव से, न ज्ञान से, न कर्म से आदमी मन के ऊपर उठ पाता है।
मन के ऊपर उठना हो तो तीनों बातों के ऊपर उठना पड़ता है। कर्म के ऊपर उठना पड़ता है, ज्ञान के ऊपर उठना पड़ता है, भाव के भी ऊपर उठना पड़ता है। सब तरह की कल्पना भी छोड़ देनी पड़ती है। सब तरह के विचार भी छोड़ देने पड़ते हैं। सब तरह की आंतरिक क्रिया भी छोड़ देनी पड़ती है।
इसका यह मतलब नहीं है कि आदमी कुछ न करेगा। नहीं, करने से वह जानेगा कि करने से सत्य नहीं मिलने वाला है। करने से वस्तुएं मिल सकती हैं। अगर मैं चलूंगा तो राजकोट आ सकता हूं, मोक्ष नहीं पहुंच सकता। चलने से मोक्ष नहीं पहुंच सकता--चलने से राजकोट पहुंच सकता हूं।
इसका यह मतलब नहीं है कि विचार करना छोड़ दें। विचार से बहुत कुछ जाना
जा सकता है। सारा विज्ञान विचार की खोज है। लेकिन विज्ञान सत्य पर नहीं पहुंच पाता, सदा एप्रॉक्सिमेट ट्रूथ पर होता है, सदा "करीब-करीब सत्य" पर होता है। सत्य पर कभी नहीं होता।

और ध्यान रहे, करीब-करीब सत्य का कोई मतलब ही नहीं होता। करीब-करीब सत्य का कोई मतलब होता है? मैं आपसे कहूं, कि मैं आपसे करीब-करीब प्रेम करता हूं, उसका कोई मतलब होता है? या मैं कहूं कि मेरी बात करीब-करीब सत्य है--उसका मतलब है असत्य। करीब-करीब, एप्रॉक्सिमेट ट्रूथ जैसी कोई चीज नहीं होती। या तो सत्य होता है या असत्य होता है। सत्य के कितने ही करीब हो तो भी असत्य ही होगा, जब तक कि सत्य नहीं है।
इसलिए विज्ञान में रोज करीब-करीब होता है। न्यूटन भी करीब-करीब था, आइंस्टीन भी करीब-करीब था। आगे भी वैज्ञानिक करीब-करीब ही होगा। कभी नहीं कह सकता कि यह रहा सत्य। वह इतना ही कहेगा कि जितना हम अभी जानते हैं। उससे ऐसा मालूम पड़ता है कि यह सत्य है। कल और जानना पड़ता है, पता लगता है कि वह सत्य नहीं है। फिर और जानना पड़ता है, पता लगता है, वह सत्य नहीं है। आज तो विज्ञान की बड़ी किताब लिखना भी मुश्किल हो गया, क्योंकि बड़ी किताब लिखनी हो तो दो साल लग जाते हैं और दो साल में सब सत्य बदल जाता है! विज्ञान आगे पहुंच जाता है। विज्ञान कभी भी सत्य के पास नहीं होता, सदा आसपास होता है! आसपास का कोई मतलब नहीं है। और कभी भी पास नहीं पहुंचेगा।
लेकिन विचार का उपयोग है। विज्ञान की अपनी ताकत है, विज्ञान की अपना सामर्थ्य। तो मैं यह नहीं कहता कि विचार छोड़ देना है। मैं यह कहता हूं, विचार विज्ञान के करीब-करीब सत्यों तक ले जाएगा, धर्म के सत्य तक नहीं। और कर्म? कर्म परमात्मा के मंदिर तक नहीं ले जाएगा। हां, आदमी के मकानों तक जाना हो तो कर्म करना पड़ेगा। और आदमी के मकानों तक जाने का अपना अर्थ है। इसलिए कर्म छोड़ देने को नहीं कहता हूं। अगर पेट भरना है, रोटी कमानी है तो कर्म करना पड़ेगा। लेकिन सत्य को अगर आत्मा में लाना है तो कर्म का कोई अर्थ नहीं है। कर्म की अपनी उपादेयता है, अपनी युटिलिटी है, उसका अपना डायमेंशन, अपना आयाम है। वहां कर्म का अर्थ है।
इसलिए मैं नहीं कहता कि कर्म से, छोड़ कर भाग जाएं। इतना ही कहता हूं कि कर्म से सत्य तक जाने की चेष्टा न करें। कर्म जहां ले जा सकता है, वहां जाना हो तो जाए। विचार जहां ले जा सकता है, वहां विचार ले जाएगा। जैसे उदाहरण के लिए अगर मैं आंख से सुनने की कोशिश करूं तो मुश्किल खड़ी हो जाएगी। आंख सुनने का साधन नहीं है। और अगर मैं आपसे कहूं कि आंख से नहीं सुना जा सकता तो इसका मतलब यह नहीं कि मैं कह रहा हूं, आंख से देखा नहीं जा सकता। आंख से देखा जा सकता है। देखना हो तो आंख से देखना। और सुनना हो तो आंख से मत सुनना। सुनना हो तो कान से सुनना पड़ेगा।
हमारे पास मन के जो साधन हैं, उनका उपयोग है; उनकी अपनी उपादेयता है। कर्म से मनुष्य बाहर के जगत से संबंधित होता है। बाहर के जगत में जो भी निर्माण हैं, जो भी विध्वंस हैं, वे सब कर्म हैं। विचार से मनुष्य जगत के जो नियम हैं, जगत के पीछे कार्य-कारण की जो व्यवस्था है, उसको समझने में वह सफल होता है और उसको समझकर उसके कर्म की शक्ति बढ़ जाती है। इसलिए बेकन ने कहाः नालेज इ.ज पॉवर। बेकन ने कहाः ज्ञान जो है वह शक्ति है। और यह ठीक कहाज्ञान शक्ति है। लेकिन सत्य नहीं। ज्ञान शक्ति है। फिर शक्ति का भी क्या करिएगा? फिर कर्म में लगाइएगा, क्योंकि शक्ति का एक ही उपयोग है कि कर्म में लगे। इसलिए जितना ज्ञान बढ़ता है, उतना कर्म बढ़ता है।
ज्ञान का करिएगा क्या? ज्ञान का उपयोग है कि कर्म बढ़े। इसलिए पूरब में कर्म कम है और पश्चिम में ज्यादा है। इतना ज्यादा है कि फुरसत ही नहीं खड़े होने की! ज्ञान बढ़ गया है, उसने कर्म को बढ़ा दिया है। कर्म इतनी तेजी से घूम रहा है कि आदमी को ठहरने का भी मौका नहीं! अगर वे एक एक जलप्रपात को भी देखने जाता है तो वह कार में से भागते हुए; खिड़की में से झांक कर देख लेता है और निकल जाता है! अगर वह एक मुल्क को देखने जाता है तो हवाई जहाज के ऊपर से देख लेता है कि मुल्क है! और निकल जाता है! वह इतना भागा हुआ है! क्योंकि कर्म ज्ञान ने शक्ति दे दी। शक्ति कर्म में रूपांतरित होगी, नहीं तो शक्ति जान ले लेगी। शक्ति कहेगी, काम चाहिए। शक्ति कहेगी, मुझे काम दो; नहीं तो मुश्किल हो जाएगी। तो शक्ति काम मांगती है, कर्म में बदल जाती है।
भाव का अपना उपयोग है। भाव का जिंदगी में अपना अर्थ है। अगर आप अपनी पत्नी से जुड़ते हैं तो भाव से जुड़ते हैं। लेकिन परमात्मा से नहीं जुड़ सकते

भाव से। और अगर अपने बेटे से जुड़ते हैं तो भाव से जुड़ते हैं। अगर अपने मित्र से जुड़ते हैं तो भाव से जुड़ते हैं, परमात्मा से नहीं। और अगर एक कोढ़ी के पैर दबाते हैं तो भाव से दबाते हैं। अगर एक गरीब की सेवा करते हैं तो भाव से करते हैं। लेकिन इससे परमात्मा का कोई लेना-देना नहीं। भाव का अपना अर्थ है।
और वह आदमी बहुत अधूरा है, जिसमें भाव न हों। वह आदमी भी बहुत अधूरा है, जिसमें विचार न हो। वह आदमी भी बहुत अधूरा है, जिसमें कर्म न हो। इन सबके अपने आयाम हैं, लेकिन सत्य इनमें से किसी आयाम से उपलब्ध नहीं होता। भाव से भाव का जगत उपलब्ध होता है, विचार से विचार का, कर्म से कर्म का।
और एक ऐसा भी जगत है, जो इन तीनों के पार है, बियांड है, जो इन तीनों के आगे है। जो ट्रांसेंड करता है। जहां न भाव रह जाता, न विचार रह जाता, न कर्म रह जाता है। जहां सिर्फ अस्तित्व रह जाता है।
अस्तित्व की तीन शाखाएं हैं। अस्तित्व के बीज में तीन शाखाएं निकली हैं--कर्म की, भाव की, विचार की। लेकिन अगर इन शाखाओं पर हम भटकते रहे तो जो जड़ है अस्तित्व की, उसका हमें पता न लगेगा। इन शाखाओं से उतर कर जड़ पर आ जाना होगा। परमात्मा या सत्य अस्तित्व है, एक्झिस्टेंस। वहां उतरने के लिए तीनों को छोड़ देना पड़ेगा।
ये तीनों मार्ग नहीं हैं, ये तीनों भटकाव हैं। इन तीनों से हम भटक सकते हैं, पहुंच नहीं सकते हैं। और अगर पहुंचना हो तो तीनों से हट जाना पड़ेगा। आने वाले तीन दिनों में, मैं इस संबंध में बात करूंगा कि ये भटकाव क्यों है? एक-एक के संबंध में गहरी आपसे बात करना चाहूंगा कि भटकाव क्यों है? यह भटकाव कैसे हो जाता है?
निश्चित ही आप पूछेंगे फिर मार्ग? चौथा कोई मार्ग होगा? चौथा भी नहीं, पांचवां भी नहीं। असल में मार्ग है ही नहीं। और जो आदमी सब मार्गों से नीचे उतर जाता है, वह वहां पहुंच जाता है, जहां पहुंचना है।
कोई मार्ग वहां नहीं ले जा सकता, उसके कारण हैं। कुछ थोड़ी सी बातें कहूं। पहली तो बात, अगर वह हमसे दूर होता तो हम किसी रास्ते से उस तक पहुंच जाते। लेकिन वह हमसे दूर नहीं; इसलिए सब रास्ते हमें दूर ले जाएंगे। अगर मुझे आपके पास पहुंचना हो तो रास्ता चाहिए। लेकिन अगर मुझे अपने ही पास पहुंचना हो तो रास्ता कैसे हो सकता है? और अगर मैंने अपने ही पास पहुंचने के लिए कोई रास्ता चुन लिया तो मैं भटका। क्योंकि मेरे पास पहुंचने के लिए रास्ता कैसे होगा? मैं अपने पास हूं ही। इसलिए जब तक मैं रास्तों पर रहूंगा, तब तक मैं अपने को भी दूर सोचता रहूंगा। जिस दिन मैं रास्ते से उतर जाऊंगा, उस दिन मैं पाऊंगा कि मैं तो यहां था ही।
बुद्ध को जिस दिन बोध हुआ, लोगों ने उनसे पूछा, कि आप पहुंच गए? पा लिया? बुद्ध ने कहाः अब मत पूछो ऐसी बातें, क्योंकि अब मैं कैसे कहूं पा लिया! क्योंकि जिसे पाया ही हुआ था, आज उसे पहचाना। पा नहीं लिया।
किस रास्ते से पहुंचे, लोगों ने पूछा? बुद्ध ने कहा कि कोई रास्ते से नहीं पहुंच सका, क्योंकि सब रास्ते वहां पहुंचाते थे, जहां मैं नहीं था। और यहां मुझे वहां पहुंचना था, जहां मैं था ही! रास्ते वहीं पहुंचा सकते हैं, जहां मैं नहीं हूं। अगर मैं वहां हूं ही तो रास्ते की क्या जरूरत है! कोई रास्ता नहीं पहुंचने का--हम वहां हैं ही।
जैसे मैं राजकोट में सो जाऊं और सपना देखूं कि कलकत्ता में हूं, और सपने में परेशान होने लगूं कि मुझे सुबह तो राजकोट पहुंचना है! बड़ी मुश्किल हो गई, मैं अब कैसे वापस लौटूं? रास्ता कहां है? लोगों से पूछने लगूं, रास्ता बताओ, कैसे जाऊं? ट्रेन से जाऊं, प्लेन से जाऊं, बैलगाड़ी पकडूं, पैदल यात्रा करूं? क्या करूं? मुझे राजकोट पहुंचना है।
और अगर कोई मुझे रास्ता बता दे और मैं उस रास्ते पर चल पडूं तो क्या आप सोचते हैं, मैं राजकोट पहुंच जाऊंगा? मैं किसी भी रास्ते से चलूं और किसी भी वाहन का उपयोग करूं, मैं राजकोट नहीं पहुंचने वाला हूं, क्योंकि राजकोट में मैं हूं ही। राजकोट कैसे पहुंचूंगा?

सुबह जब मेरी नींद खुले, जब मैं नींद खुलने पर देखूं, कोई मुझसे पूछे
कि पहुंच गए राजकोट? तो मैं कहूं कहना मुश्किल है कि पहुंच गया था ही।
आश्चर्य तो यह है कि होते हुए, कैसे भटक गया था? कहां भटक गया था? कैसे मुझे यह खयाल आ गया था कि मैं राजकोट से दूर कलकत्ता चला गया हूं!
परमात्मा वहां है, जहां हम हैं। सत्य वहां है, जहां हम सदा से हैं। सत्य वहां है, जहां से अलग होने का कोई उपाय नहीं।
लोग मुझसे पूछते हैं कि परमात्मा को कैसे खोजें? तो मैं उनसे पूछता हूं तुमने खोया कैसे? अगर तुम मुझे बता दो कि हमने इस भांति खोया तो मैं तुम्हें बता दूं कि इस भांति तुम उसे पा लोगे।
वे कहते हैं, नहीं खोने का तो हमें कुछ पता नहीं! हमने खोया है, यह पता नहीं! तो मैंने कहा, जिसे खोया ही नहीं है, जिसे खोने का भी पता नहीं है, उसे खोजने के पागलपन में क्यों पड़ते हो? उसे खोजो ही मत। तुम सब खोज छोड़ दो। और लाओत्से ने दो-तीन छोटे-छोटे वचन कहे। उसका एक वचन है सीक एण्ड यू विल नॉट फाइंड, खोजो और तुम नहीं पा सकोगे! डू नॉट सीक एण्ड फाइंड, खोजो मत और पा लोगे!
बड़ी उलटी बात कह रहा है, लेकिन आज तक इस दुनिया में जो भी जानते हैं, उन्होंने अनिवार्य रूप से उलटी बात कही। क्योंकि अगर सपने में आप मुझसे पूछें कि मैं राजकोट कैसे पहुंचूं? तो मैं आपसे कहूंगा पहुंचना बंद कर दो, तुम राजकोट में हो। तुम पूछो ही मत रास्ता।
लेकिन आप कहें, बिना गुरु के मैं कैसे पहुंचूंगा? मुझे कोई गुरु बता दे, कोई रास्ता बता दे, कोई मार्ग बता दे, जिससे मैं पहुंच जाऊं!
और मैं आपसे कहूं कि अगर तुम्हें कोई गुरु मिल गया तो तुम मुश्किल में
पड़ जाओगे। सब गुरु मुश्किल में डाल देते हैं, क्योंकि वे रास्ता बता देते हैं! वे कहते हैं, यह रहा रास्ता, ऐसे चले आओ! बस यहां से पहुंच जाओ! गुरु कहता है, रास्ता है।
और जब कोई गुरु कहता है, रास्ता है, तब वह यह कहता है कि जिसे हम खोज रहे हैं, वह खो दिया गया है! तब वह यह कहता है कि जहां हमें पहुंचना है, वहां हम हैं नहीं! तब वह कहता है, परमात्मा और हमारे बीच फासला है, डिस्टेंस है, जिसको रास्ते से पूरा करना है! सब गुरु परमात्मा के दुश्मन हैं, क्योंकि परमात्मा वहां है, जहां हम हैं।
परमात्मा हमारा स्वभाव है। उसे हम खो नहीं सकते। उसे खोने का कोई रास्ता नहीं। हम कहीं भी भागें और दौड़ें; और हम कहीं भी जाएं, वह हमारे साथ है। हम ही हैं वह। वही सांस ले रहा है, वही चेतन हुआ है, वही झांक रहा है आंखों से, वही बोल रहा है, वही सुन रहा है। उसे हम खो नहीं सकते। हम सो जाएं तो वही सो रहा है, हम जाग जाएं तो वही जाग रहा है।
रास्ते की संभावना नहीं है। लेकिन आदमी ने रास्ते बनाए हैं। क्योंकि आदमी का मन--जिसने सारा भटकाव पैदा किया है, रास्ते भी बनवा देता है। आदमी का मन--गुरु भी पैदा करवा देता है। आदमी का मन--साधनाएं भी करवा देता है, योग भी सधवा देता है। आदमी का मन--सब कुछ करवा देता है। और आदमी का मन, जब तक करवाता रहता है, तब तक हम सपने में पड़े रहते हैं। मन सपना है। मन जो है, वह ड्रीम है। मन जो है, वह नींद है। और नींद से जागना हो तो मन को भोजन देना बंद करना पड़े। अगर एक क्षण के लिए भी मन को भोजन मिलना बंद हो जाए, उसको फ्यूल मिलना बंद हो जाए तो मन के सारे खेल समाप्त हो जाएंगे!
जैसे कार है, आप फ्यूल दे रहे हैं, पेट्रोल दे रहे हैं--वह चल रही है। अगर मैं आपसे कहूं कि एक मिनट भी कार को पेट्रोल न मिले! तो आप कहेंगे एक मिनट से क्या फर्क पड़ेगा? एक मिनट से क्या होता है? मैं आपसे कहता हूं, एक मिनट भी फ्यूल न मिले तो कार रुक जाएगी। हां, कार बेचने वालों की बातों में पड़ जाएं तो झंझट है।
मैंने सुना है, फोर्ड की एक दुकान पर एक एजेंट फोर्ड की गाड़ियां बेचता था। वह एक आदमी को गाड़ी में लेकर गया। कोई पांच-सात मील जाकर। गाड़ी दिखाने गया था, पसंद पड़ जाए। पांच-सात मील जाकर गाड़ी उसकी रुक गई तो उस आदमी ने पूछा, अरे, नई गाड़ी और यह क्या होता है? उसने कहा, मालूम होता है, मैं पेट्रोल डालना भूल गया। देखा उसने कहा तो टंकी खाली है, मैं बिना पेट्रोल

डाले ही चला आया। उस आदमी ने कहा, तो बिना पेट्रोल डाले सात मील कैसे चले आए? उसने कहा, इतना तो फोर्ड के नाम से चल जाती है! इतने के लिए पेट्रोल की कोई जरूरत नहीं!
एजेंटों की बात अलग है। जो फ्यूल के बिना चलाते हैं। वे फोर्ड के एजेंट हों, राम के एजेंट हों, महावीर के एजेंट हों, कृष्ण के एजेंट हों, उससे कोई फर्क नहीं पड़ता। दुकानदारों की, एजेंटों की बात अलग है। वे चला सकते हैं। वे कहते हैं, राम-नाम के सहारे ही चल जाएगी, उसमें क्या रखा हुआ है! अगर राम-नाम के सहारे चलती है तो फोर्ड के नाम क्यों नहीं चल सकती है, चल सकती है? इसमें क्या बात है!
लेकिन एक मिनट पेट्रोल न हो तो गाड़ी वही खड़ी हो जाएगी। मन के लिए अगर
एक मिनट भी फ्यूल न मिले तो मन टूट जाता है। एक सेकेंड को भी टूट जाए तो आपको झलक मिल जाती है मन के बाहर की। एक मिनट के लिए नींद खुल जाए तो आप दूसरी दुनिया को जान लेते हैं, जिसको आपने नींद में नहीं जाना।
तो मैं नहीं कहता कि आप अपने कर्म को छोड़कर भाग जाएं, मैं नहीं कहता कि
आप विचार करना बंद कर दें, मैं नहीं कहता कि आप भाव न करें। मैं यह कहता हूं कि आप इन तीनों की पूरी प्रक्रिया को समझ लें और चौबीस घंटे में क्षण भर के लिए भी अगर भाव, कर्म और विचार तीनों शांत हो जाएं, तो उस क्षण में ही आप हैरान होंगे कि किसको खोज रहे हैं? जिसे मैं खोज रहा हूं, वह तो मैं ही हूं! मैं किसकी तलाश में हूं? जिसकी मैं तलाश कर रहा हूं, वह तलाश करने वाला ही हूं! मैं कहां जाना चाहता हूं? जहां मैं जाना चाहता हूं, वहां मैं सदा से खड़ा हूं! और एक क्षण को भी यह बोध हो जाए, तब आप बिल्कुल दूसरे आदमी हो गए। इसके बाद आप कर्म करिए तो भी आप भीतर जानते हैं कि कुछ है, जो नहीं कर रहा है! इसके बाद विचार करिए, फिर भी आप जानते हैं कि कुछ है, जो विचार के बाहर है। फिर आप प्रेम करिए और प्रेम के गहरे से गहरे क्षण में भी आप जानते हैं कि कोई है, जो प्रेम करने को भी देख रहा है और साक्षी है। फिर आप कुछ भी करिए, फिर इस जगत में आप एक अभिनेता से ज्यादा नहीं।
अभी एक नया-नया हुआ अभिनेता मेरे पास आया था। और उसने मुझे कहा कि मुझे कोई, मेरी डायरी पर कोई एक वाक्य लिख दें, जो मेरे काम पड़ जाए। मैं नया-नया आया हूं अभिनय की दुनिया में। दो फिल्मों में काम कर रहा हूं, लेकिन अभी अभी मेरी कुछ समझ नहीं है। आपके पास आया हूं, पता नहीं आप बुरा तो न मानेंगे? क्योंकि मैं अभिनय के संबंध में सलाह लेने आया हूं।
मैंने कहा, बुरा मानने की जरूरत नहीं, मैं इसी के संबंध में सभी को सलाह दे रहा हूं। मैंने उसकी डायरी पर एक वाक्य लिख दिया। वह मैं चाहूंगा, आपकी डायरी पर भी आप लिख लेंगे।
मैंने उसकी डायरी पर लिख दिया कि अगर ठीक अभिनेता होना हो तो अभिनय ऐसे करना, जैसे कि यह जिंदगी है। और अगर ठीक जिंदगी पानी हो तो जीना ऐसे जैसे कि यह अभिनय है।
अगर अभिनेता इस तरह अभिनय कर पाए कि समझ ले कि यह जिंदगी है तो सफल हो जाता है। और अगर कोई जिंदगी में इस तरह जी पाए कि देख ले कि यह अभिनय है, तो जिंदगी के रहस्य को और सत्य को पा जाता है।
मेरे लिए कोई मार्ग नहीं है--क्योंकि मैं आपको सिर्फ सपने में देखता हूं। कहीं आप भटक नहीं गए हैं, सिर्फ सो गए हैं।
इसलिए इन तीन दिनों में तीन मार्गों को तोड़ने की कोशिश करूंगा। अगर
ये तीनों टूट जाएं तो आप बिना मार्ग के हो जाएंगे। और धन्यभागी हैं वे, जिसके पास कोई मार्ग नहीं, क्योंकि तब उसको जाने का उपाय न रहा। तब वह खड़ा हो जाएगा। करेगा क्या? रास्ता नहीं है, खड़ा ही होना पड़ेगा। और जो खड़ा हो जाता है, ठहर जाता है, उसे वह दिखाई पड़ जाता है, जो सदा से मौजूद है।
लेकिन हम दौड़ रहे हैं, हम भाग रहे हैं, हम नये-नये रास्ते खोज रहे हैं।
हम उसे देख ही नहीं पाते, जो चारों तरफ मौजूद है! क्योंकि उसे देखने के लिए क्षण भर तो कम से कम खड़ा होना जरूरी है।
अगर मार्ग की भाषा में ही पूछना हो तो मैं कहूंगा मार्गों को छोड़ देना मार्ग है, दौड़ बंद कर देना मार्ग है, रुक जाना मार्ग है, ठहर जाना मार्ग है।

लेकिन निश्चित ही कोई मार्ग ठहरने के लिए नहीं होता। मार्ग चलने के लिए होता है।
मार्ग कहता है, चलो।
और धर्म कहता है, ठहरो। इसलिए धर्म का कोई मार्ग नहीं हो सकता।
मार्ग कहता है, चलो। मार्ग कहता है, दौड़ो। मार्ग कहता है, तेजी से दौड़ो। और मार्ग कहता है, दूसरे मार्ग पर मत चले जाना, नहीं तो भटक जाओगे।
यह मेरा मार्ग ठीक है। इसलिए सब मार्गी भटकाते हैं, सब पंथी भटकाते हैं।
धर्म का कोई मार्ग नहीं है, कोई पंथ नहीं है। धर्म कहता है, ठहरो। धर्म कहता है, रुक जाओ। धर्म कहता है, दौड़ो मत।
लेकिन "दौड़ो मत" के लिए भी कोई मार्ग होता है? ठहरने के लिए भी कोई मार्ग होता है? रुक जाने का भी कोई मार्ग होता है? नहीं, रुक जाने का तो मतलब ही यह होता है कोई मार्ग नहीं। और जब आपको पता चलेगा कोई मार्ग नहीं है, तभी आप रुक सकते हैं, नहीं तो आप दौड़ते ही रहेंगे।
एक मार्ग से ऊब जाएंगे तो दूसरा मार्ग पकड़ लेंगे! ईसाई हिंदू हो जाता है! हिंदू ईसाई हो रहे हैं! कोई कुरान से बदल कर गीता पकड़ लेता है! गीता बदल कर कोई कुरान पकड़ लेता है! कोई इस गुरु को छोड़ कर उस गुरु के पास चला जाता है! उस गुरु से उस गुरु के पास चला जाता है!
कब वह दिन आएगा, जब आप कहेंगे, कोई गुरु नहीं, कोई मार्ग नहीं, कोई शास्त्र नहीं? जिस दिन यह क्षण आ जाएगा, उस दिन चलने का उपाय न रहेगा-आप खड़े हो जाएंगे। जिस दिन आप, जिस क्षण आप खड़े हो जाते हैं, उसी क्षण, वह क्रांति घटित हो जाती है, जिसका नाम धर्म है।
इन तीन दिनों में, तीनों मार्गों को तोड़ने की कोशिश करूंगा और आशा रखूंगा कि चार दिन के बाद, जब मैं जाऊं तो आपके पास कोई मार्ग न हो, आप खड़े रह जाएं।
ध्यान रहे कि परमात्मा आपको बहुत खोज रहा है, लेकिन आप मिलते ही नहीं!
आप इतने भागे रहते हैं कि जब तक वह पहुंचता है, तब तक आप आगे निकल जाते हैं! कितना ही दौड़ें, आप उससे तेज दौड़ लगाते हैं, आप आगे निकल जाते हैं! जब तक वह पता लगा कर पहुंचता है, तब तक पाता है कि आप कहीं और, किसी और मार्ग पर चले गए हैं!
आदमी को भगवान को नहीं खोजना है, भगवान निरंतर आदमी को खोज रहा है। लेकिन आदमी घर पर तो मिल जाए कम से कम। वह जब भी आता है, दरवाजा खटखटाता है, पता चलता है, और कहीं है! जब तक वहां पहुंचता है, तब पता लगता है, वह और कहीं चले गए! इससे मुलाकात नहीं हो पाती। एक छोटी सी कहानी, और यह बात मैं पूरी करूंगा।
मैंने सुना है, एक बहुत शक्की आदमी था। ऐसे तो सभी आदमी शक्की होते हैं। वह अपने घर में ताला भी लगाता था, तो उसे चार बार हिला कर लौट-लौट कर देख जाता था! पता नहीं लगाया कि नहीं लगाया! कहीं भूल न हो गई हो। वह एक दिन सुबह-सुबह एक दुकान पर बाल बनवाने गया है। नाई ने उसके बाल तो बना दिए उसने उसे रुपया दिया है। नाई से कहा आठ आने हुए। लेकिन बाकी आठ आने मेरे पास अभी हैं नहीं, कल ले जाना।
उसने सोचा, कल पता नहीं यह आदमी बदल जाए। और इतने जोर से बदलाहट हो रही
है दुनिया में। किसी का कोई भरोसा ही नहीं, कौन कब कहां हो? आज नाई है, कल ब्राह्मण हो जाए; कुछ पक्का पता नहीं! आज यह दुकान कर रहा है, कल दुकान बदल दे! कुछ पक्का है ही नहीं, चीजें इतनी जोर से बदल रही हैं। किसी का कोई ठिकाना नहीं कि कोई कल वहीं मिलेगा, जहां कल सुबह आपने उसे पाया था।
उसने सोचा, कुछ पक्का कर लेना चाहिए, नहीं तो आदमी बदल जाए। उसने सोचा, बोर्ड ठीक से पढ़ लूं। उसने कहा, बोर्ड का क्या भरोसा, दो मिनट में बदल जाता है। कांग्रेसी है, कम्युनिस्ट हो जाता है! कम्युनिस्ट, कांग्रेसी हो जाता है! कुछ पक्का पता नहीं, यह बोर्ड का क्या है। उसने सोचा आदमी की शक्ल-सूरत देखूं। लेकिन शक्ल-सूरत का क्या भरोसा है। गृहस्थ संन्यासी हो जाता है। सब शक्ल-सूरत बदल देता है। रात भर में क्या, क्षण में सब हो जाता है! उसने कहा, कुछ ऐसा इंतजाम करो कि इसको पता ही न हो, जिसको वह बदल न सके। आखिर वह इंतजाम करके चला गया।

वह दूसरे दिन सुबह आया और उसने जाकर अंदर दुकान में गरदन पकड़ ली! उसने कहा, यही तो मैंने सोचा था!
वहां एक भैंस बैठी थी बाहर, उसको देख कर चला गया। उसने कहा, इस भैंस का क्या पता होगा इसको कि भैंस बाहर बैठी है। जहां कल भैंस होगी, वहीं उसको अपन पकड़ लेंगे फौरन। भैंस रात भर में चली गई। भैंस का कोई भरोसा है क्या? आदमी का भरोसा नहीं, तो भैंस का भरोसा तो बहुत मुश्किल है। भैंस चली गई! दूसरे दिन सुबह वह जब पहुंचा एक मिठाई वाले की दुकान के सामने बैठी थी। उसने जाकर मिठाई वाले की गरदन पकड़ ली! और उसने कहा, धन्य हो, हद कर दी, आठ आने के पीछे इतनी बदलाहट! कह देते कि नहीं देना। इतनी परेशानी उठाई होगी सब काम ही बदल दिए! मगर हम भी इंतजाम पक्का करके गए थे। वह भैंस बाहर छोड़ गए थे। वह वहीं बैठी है, जहां हम छोड़ गए थे! सब बदल गया, लेकिन भैंस वहीं है!
परमात्मा हमें खोज भी रहा हो तो कैसे खोज पाएगा? सब तो बदल जाता है रोज। जो कल सुबह हम थे, वह आज सांझ नहीं है। जो आज सांझ हैं, वे कल सुबह नहीं होंगे। सब बदल जाता है। उस जगह नहीं होते, जहां थे। सब भाग जाता है, सब दौड़ जाता है! और तेजी से भाग रहे हैं!
एक क्षण को भी अगर हम खड़े हो जाएं तो उससे मिलने में बाधा नहीं है। वह
है ही सब जगह मौजूद। सिर्फ हमारे खड़े होने की प्रतीक्षा है। परमात्मा प्रतीक्षा में है उसकी, जो खड़ा हो जाता है। जो खड़ा हो जाता है, वह उपलब्ध हो जाता है।
रास्ता नहीं है, मार्ग नहीं है, पंथ नहीं है। कोई गुरु नहीं है। आप हैं
और परमात्मा है।
और आप भी दौड़ रहे हैं, इसलिए "हैं", अगर ठहर जाएं तो आप फौरन मिट जाएंगे
और परमात्मा ही रह जाएगा।
जब तक दौड़ रहे हैं, तब तक आप हैं और परमात्मा है, क्योंकि दौड़ आपको भ्रम पैदा कर रही है कि "मैं" हूं। दौड़ गई, फ्यूल न मिला, कि आप भी गए, आपका मन गया; कि आप भी गए। तब जो शेष रह जाता है, वह परमात्मा ही है। परमात्मा करे हम मिट सकें और वही रह जाए जो वही है। हमारा होना नितांत झूठ है। लेकिन इस झूठ को यह खयाल पैदा हो गया है कि हम सत्य से मिल कर रहेंगे! अब यह झूठ सत्य से कैसे मिलेगा?
हम कहते हैं कि मुझे दर्शन करने हैं--परमात्मा के। मैं और दर्शन करूंगा उसके? मैं कैसे उसके दर्शन करूंगा? "मैं" ही तो झूठ हूं। "मैं" न रह जाऊं तो उसके दर्शन हो जाएं। लेकिन मैं कहता हूं, "मैं" दर्शन करूंगा। "मैं" मिल कर रहूंगा, "मैं" उसको खोज कर रहूंगा! और "मैं" इस सब खोज और मिलने और दौड़ने में मजबूत होता चला जाता है और बाधा बन जाता है।
एक-एक--कल ज्ञान पर, फिर भक्ति पर, फिर कर्म पर, तीनों पर बात करूंगा।
एक दम निषेधात्मक, विध्वंसक, तोड़ देने वाली। रास्ते टूट जाएं तो वह द्वार पर खड़ा है।

मेरी बातों को इतनी शांति और प्रेम से सुना, उससे अनुगृहीत हूं। अंत में सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं। मेरे प्रमाण स्वीकार करें।

शून्य के पार
दूसरा प्रवचन

ज्ञानः मार्ग नहीं, भटकन है
(7 मार्च 1970 सुबह)

मेरे प्रिय आत्मन्!
मनुष्य को खंडों में तोड़ना और फिर किसी एक खंड से सत्य को जानने की कोशिश करना, अखंड सत्य को जानने का द्वार नहीं बन सकता है।
अखंड को जानना हो तो अखंड मनुष्य ही जान सकता है।
न तो कर्म से जाना जा सकता है, क्योंकि कर्म मनुष्य का एक खंड है। न ज्ञान से जाना जा सकता है, क्योंकि ज्ञान भी मनुष्य का एक खंड है। और न भाव से जाना जा सकता है, भक्ति से, क्योंकि वह भी मनुष्य का एक खंड है।
अखंड से जाना जा सकता है। और ध्यान रहे, इन तीनों को जोड़ कर अखंड नहीं बनता। इन तीनों को छोड़कर जो शेष रह जाता है, वह अखंड है। जोड़ से कभी अखंड नहीं बनता। जोड़ में खंड मौजूद ही रहते हैं।
जैसे उदाहरण के लिए, हिंदू मुसलमान को जोड़ कर कभी हम एकता स्थापित नहीं कर सकते। हिंदू मुसलमान जुड़ जाएं तो भी दो खंड सदा मौजूद रहते हैं। लेकिन हिंदू हिंदू न रह जाए, मुसलमान मुसलमान न रह जाए, तब जो शेष रह जाता है, वह एकता है। हिंदू मुसलमान को जोड़ने से एकता नहीं होने वाली। हिंदू मुसलमान दोनों ही हिंदू मुसलमान न रह जाएं, तब जो शेष रह जाएगी आदमियत, वह एक होगी।
बुद्धि को, भाव को, कर्म को, जोड़ने के भी प्रयास किए गए हैं। किन-किनों
को हम जोड़ लें, लेकिन इन तीनों से जो जोड़कर बनता है, वह अखंड नहीं है। क्योंकि जो जोड़ कर बनता है, वह अखंड हो ही नहीं सकता। उसमें खंड मौजूद रहेंगे ही। जुड़े हुए होगे, लेकिन मौजूद होंगे। अखंड तो खंडों से मुक्त होकर ही मिलता है। ट्रांसेंडेंस से मिलता है, अतिक्रमण से मिलता है। जब हम खंडों के ऊपर उठ जाते हैं, तब मिलता है।
अखंड जोड़ नहीं है, अखंड खंड से मुक्त हो जाना है।
मनुष्य का मन खंडन की प्रक्रिया है। मनुष्य का जो मन है, वह चीजों को खंड-खंड करके देखता है! जैसे आपने सूरज की किरण देखी है, सूरज की किरण अगर कांच के प्रिज्म के टुकड़े में से निकाली जाए तो खंड-खंड हो जाती है। सात टुकड़ों में टूट जाती है। सात रंग पैदा हो जाते हैं। सूरज की किरण सिर्फ शुभ्र है। शुभ्र कोई रंग नहीं है। शुभ्र कोई रंग नहीं है, जब प्रिज्म से किरण टूटती है, तब सात रंग दिखाई पड़ने शुरू होते हैं।
बुद्धि का जो प्रिज्म है, बुद्धि का जो टुकड़ा है, बुद्धि का जो देखने
का ढंग है--वह चीजों को तोड़ कर देखने का ढंग है! बुद्धि सदा तोड़ कर ही देख सकती है! बुद्धि कभी इकट्ठे को नहीं देख सकती। बुद्धि सदा खंड को देख सकती है। अखंड को नहीं देख सकती।
तो बुद्धि जीवन के सत्य को कई खंडों में तोड़ देती है। वे खंड बुद्धि
के द्वारा तोड़े गए हैं और ऐसे ही झूठ हैं, जैसे पानी में हम लकड़ी को डाल दें और लकड़ी तिरछी दिखाई पड़ने लगे! तिरछी हो नहीं जाती, सिर्फ दिखाई पड़ती है। बाहर निकाल लें पानी के, वह फिर सीधी हो जाती है। सीधी हो नहीं जाती, सीधी थी ही। सिर्फ वह तिरछा दिखाई पड़ना, जो पानी की वजह से पैदा होता था, माध्यम की वजह से पैदा होता था, वह विदा हो जाता है। पानी में डाल दें, फिर वह लकड़ी तिरछी दिखाई पड़ने लगती है।
क्या लकड़ी पानी के भीतर तिरछी हो जाती है? अगर आप अपना हाथ डालकर लकड़ी
को देखें पानी के भीतर तो भी पता चलेगा कि वह तिरछी नहीं हुई। लेकिन हाथ भी तिरछा मालूम पड़ने लगेगा! पानी के माध्यम में सभी चीजें तिरछी हो जाती हैं, दिखाई पड़ने लगती हैं।
बुद्धि के माध्यम में सभी चीजें टूट जाती हैं, टुकड़ों में हो जाती हैं। और बुद्धि के तीन टुकड़े हैं। विचार है, भाव है, कर्म है। इसलिए बुद्धि जब भी देखेगी तो तोड़ कर देखेगी। फिर बुद्धि एक काम और भी कर सकती है कि इन

तीनों को जोड़ लो, लेकिन वह जोड़ भी अखंड नहीं होगा। बुद्धि का जोड़ एकदम भ्रांत होगा। बुद्धि जोड़ सकती है ऊपर से, लेकिन खंड फिर भी मौजूद रह जाएंगे। जिन्हें जोड़ेंगे हम, वे मौजूद रहेंगे। जुड़े हुए भी मौजूद रहेंगे। अखंड सत्य को जानना हो तो, तो मन को पार करना जरूरी है। और उसे पार करने के लिए कर्म भी सहयोगी नहीं है, भाव भी सहयोगी नहीं, ज्ञान भी सहयोगी नहीं। इस बात को थोड़ा ठीक से समझ लेना जरूरी है, फिर मैं, आपके कल के संबंध में कुछ प्रश्न हैं, उनकी बात करूं।
अखंड को जानने के लिए मुझे भी अखंड ही खड़ा होना पड़ेगा, क्योंकि मैं वही जान सकता हूं, जो मैं हूं। मैं उसे नहीं जान सकता, जो मैं नहीं हूं। आपके पास आंख है, इसलिए आप सूरज की किरण को जान पाते हैं। अगर आपके पास आंख नहीं है तो आप सूरज की किरण को नहीं जान पाते। सूरज को जानना हो तो आंख का होना जरूरी है। अंधा सूरज को नहीं जान पाएगा। आप ध्वनि को सुन पाते हैं, तो उसके लिए कान होना जरूरी है। आपके पास कुछ होना जरूरी है, तभी आप कुछ जान सकते हैं।
अगर अखंड को जानना हो तो आपके पास क्या होना जरूरी है? अगर अखंड को जानना है तो आपके पास एक अखंड चेतना होनी जरूरी है। इंटीग्रेटेड कांशसनेस होनी जरूरी है। जिसमें कोई तोड़ न हो, खंड न हो।
लेकिन अभी हमारे पास जो मन है, वह खंड-खंड ही है। मन खंड-खंड ही होता है। मन के होने का ढंग ही यही है। मन के होने की व्यवस्था ही यही है।
और मन के होने की यह व्यवस्था किसी दिशा में उपयोगी भी है। जरूरी है
कि किन्हीं आयाम में, किन्हीं दिशाओं में मन खंड-खंड देखे। और उसका उपयोग भी है। जब कोई आदमी सोच रहा हो, अगर उसी समय भाव भी करे तो सोचना मुश्किल हो जाएगा। जैसे एक वैज्ञानिक विचार करता है तो उस समय उसे समस्त भाव से मुक्त हो जाना जरूरी है। अगर वह भाव भी भीतर रखता है तो फिर वह वैज्ञानिक न हो सकेगा। भाव का मतलब होगा उसका प्रिज्युडिस, पक्षपात।
एक डाक्टर बेनर्जी हैं। उनका नाम शायद आपने सुना हो, वे जयपुर विश्वविद्यालय में पुनर्जन्म के संबंध में खोजबीन करते हैं। वह मुझे मिलने बंबई आए। दस-बीस लोग इकट्ठे हो गए थे, हम दोनों की बात सुनने को। उन डाक्टर बेनर्जी ने कहा कि मैं यह सिद्ध करना चाहता हूं वैज्ञानिक रूप से कि पुनर्जन्म होता है!
मैंने उनसे कहा कि यह जो बात आप कह रहे हैं, यह बात ही अवैज्ञानिक हो
गई है।
उन्होंने कहाः क्या मतलब?
मैंने उनसे कहाः वैज्ञानिक कुछ भी सिद्ध नहीं करना चाहता। और अगर सिद्ध करना चाहता है तो उसका मतलब है सिद्ध करने के पहले ही उसने मान रखा है, कि सिद्ध क्या करना है। आप कहते हैं, "मैं सिद्ध करना चाहता हूं वैज्ञानिक रूप से कि पुनर्जन्म है," यह बात ही अवैज्ञानिक हो गई। अभी सिद्ध नहीं हुआ और आपने सिद्ध मान रखा है मन में! उसी को आप सिद्ध करना चाहते हैं!
वैज्ञानिक यह कहता है मुझे पता नहीं कि पुनर्जन्म है या नहीं। जो भी होगा, उसे मैं जानना चाहता हूं। उसका अपना कोई भाव नहीं होना चाहिए अन्यथा वह अपने भाव के अनुरूप सिद्ध कर लेगा। वैज्ञानिक के पास भाव होगा तो वह वैज्ञानिक नहीं हो सकता। उसे सब भाव छोड़ देने पड़ेंगे। उसे सिर्फ विचार करना पड़ेगा। उसके पास कोई पक्षपात नहीं होना चाहिए। अगर उसके पास जरा-सा भी पक्षपात है तो वह जो खोज करेगा, वह खोज वैज्ञानिक नहीं रह जाएगी।
तो मन को तो खंड करना जरूरी है। मन का खंड होना बहुत आवश्यक है, नहीं
तो विचार असंभव हो जाएगा। इसलिए बहुत भावुक लोग विचार नहीं कर पाते। उनका भाव बाधा देता है।
इसलिए जो कौमें बहुत भाव से भरी हैं, वे वैज्ञानिक नहीं हो पाईं। जैसे हमारी ही कौम है। वह भाव से अति प्रेरित है, इसलिए विज्ञान का जन्म नहीं हो पाया। विज्ञान के जन्म के लिए भाव को बिल्कुल हट जाना जरूरी है।
और अगर कोई बहुत भावुक हो और बीच-बीच में विज्ञान और विचार उसमें प्रवेश करें तो भी मुश्किल में पड़ जाएगा। अगर आपको किसी का चेहरा सुंदर

लगता है। और आपका विचार बीच में आ जाए और कहने लगे, क्यों सुंदर लगता है? तो आप मुश्किल में पड़ जाएंगे, क्योंकि सुंदर लगना विचार की बात नहीं, सिर्फ भाव की बात है। उसके लिए कोई तर्क की जरूरत नहीं। और अगर तर्क बीच में आया तो आप थोड़ी देर में ही मुश्किल में पड़ जाएंगे। पता लगाना मुश्किल हो जाएगा कि क्यों सुंदर लगता है?
अगर मुझे किसी से प्रेम हो गया, और मैं विचार करने लगूं वैज्ञानिक रूप
से कि मेरा प्रेम क्यों हो गया? तो प्रेम खो जाएगा। प्रेम नहीं बचेगा। क्योंकि प्रेम के लिए वैज्ञानिक विचार की कोई भी जरूरत नहीं है, इसलिए जो लोग बहुत वैज्ञानिक ढंग से चिंतन करेंगे, वे प्रेम करने में असमर्थ हो जाएंगे।
जो लोग बहुत वैज्ञानिक ढंग से विचार करते हैं, वे कविता नहीं लिख सकते, क्योंकि काव्य में विचार की कोई जरूरत नहीं। वहां तो विचार जितना कम होगा, उतनी ही काव्य की गति होगी। अगर एक वैज्ञानिक से जाकर मैं कहूं कि मेरी जो प्रेयसी है, उसका चेहरा मुझे चांद जैसा मालूम पड़ता है। तो वह कहेगा, आपका दिमाग खराब हो गया--कहां चांद और कहां स्त्री का चेहरा! उनके बीच तालमेल ही नहीं। अगर इनको तराजू पर रखकर तौलें तो कोई तौल नहीं। कहां चांद, कहां एक स्त्री का चेहरा! चांद से स्त्री के चेहरे का क्या संबंध। वह मुझे मुश्किल में डाल देगा और मैं सिद्ध न कर पाऊंगा कि किसी स्त्री का चेहरा और चांद जैसा हो सकता है। हो भी नहीं सकता। लेकिन भाव में हो सकता है, गणित में नहीं हो सकता। गणित और भाव की अलग दुनिया है, उनकी अलग यात्राएं हैं।
मन तीन आयाम में काम करता है। और जिसे कर्म करना हो, उसे भी बहुत भावुक नहीं होना चाहिए, अन्यथा कर्म में बाधा पड़ेगी। जिसे कर्म करना हो, उसे भी बहुत विचार में नहीं पड़ना चाहिए। नहीं तो विचार बाधा डालेगा।
मैंने सुना है कि एक विचारक पहले महायुद्ध में भर्ती हो गया था। युद्ध था जोर पर और वह विचारक युद्ध में भर्ती हो गया। लेकिन वह विचारक था। जब उसे मिलिटरी में ट्रेनिंग दी गई और कहा गया बाएं घूम जाओ तो सारे लोग तो बाएं घूम गए और वह खड़ा ही रहा!
उसके प्रधान ने उससे कहाः आप घूमते क्यों नहीं? तो उसने कहा, मैं बिना विचारे कुछ भी नहीं कर सकता हूं। मैं सोच रहा हूं कि बाएं क्यों घूम जाऊं? उसने कहा कि अगर इस तरह सोच-विचार चलेगा तो आप हमारे काम के नहीं। मिलिट्री में सोच-विचार से काम नहीं चल सकता--आज्ञा परम है। उसमें सोच-विचार की आपको जरूरत नहीं। कहा, बाएं घूम जाओ तो बाएं घूम जाएं।
लेकिन उस आदमी ने कहा, पहले मैं सोच तो लूं कि क्यों घूम जाऊं? उसे बहुत दिन सिखाया गया, लेकिन वह बाएं-दाएं भी घूम न सका! सोचे न, तो कर न सके। लेकिन भर्ती हो गया था तो उसके प्रधान ने उसे जो मिलिट्री का मेस था, भोजनालय था, वहां भेज दिया कि तुम वहीं कुछ काम करो।
मटर बनने आए थे सब्जी के लिए तो उसे कहा कि तुम छोटे मटर अलग कर लो, बड़े मटर अलग कर लो। घंटे भर बाद जब उसका प्रधान गया तो वह थाली में सब मटर जैसे थे, वैसे ही रखे हुए बैठा था--आंख बंद किए हुए! उसके प्रधान ने कहा, तुम क्या कर रहे हो? अभी तक यह भी न कर पाए!
उसने कहाः मैं बड़ी मुश्किल में पड़ गया हूं। आप ठीक कहते हैं, छोटे और बड़े अलग कर दूं। लेकिन कुछ मटर ऐसे भी हैं, जो बिल्कुल बीच के हैं--न छोटे हैं, न बड़े हैं, उनको मैं कहां करूं? और जब तक यह तय न हो जाए, तब तक कुछ भी करना मेरे लिए संभव नहीं है! मैं पहले सोच लूं, तब कुछ करूं!
मन विभाजित है, मन के काम के लिए जरूरी है कि मन विभाजित हो। मन के कंपार्टमेंट आवश्यक हैं, कि वहां खंड-खंड हों। और इसलिए मन सत्य को नहीं जान पाता। क्योंकि सत्य कोई उपयोगिता नहीं है।
सत्य तो, अखंड जो है, उसे जानने की बात है। शायद "जानना" कहना भी ठीक नहीं, क्योंकि जानने से ज्ञान का खयाल आता है। इसलिए सत्य को जब हम कहते हैं "जानना" तो ज्ञान का खयाल मत ले लेना आप। सत्य को जानने का मतलब है, सत्य के साथ एक ही हो जाना। लेकिन शायद "हो जाने" से भाव का खयाल आता है।

जिसे हम प्रेम करते हैं, उसके साथ एक हो जाते हैं। लेकिन सत्य के साथ "एक हो जाने" का भी यह अर्थ नहीं है, जो भाव का अर्थ होता है।
इसलिए सच बात तो यह है कि सत्य को हम जानना कहें, होना कहें, करना कहें--कोई भी शब्द कारगर नहीं है। क्योंकि हमारे सारे शब्द मन की तीन चीजों के लिए, काम के लिए बनाए गए है--या तो कर्म के लिए, या भाव के लिए, या ज्ञान के लिए। हमारी सारी भाषा मन की बनाई भाषा है। इसलिए तो जो सत्य को जानते हैं, वे कहते हैं कि कहना मुश्किल है, क्योंकि उसे कहने के लिए मन ने कोई भाषा विकसित नहीं की।
मन ने जो भाषा विकसित की है, वह तीन कामों के लिए की। मन काम कर सकता है, उसकी भाषा है उसके पास। मन प्रेम कर सकता है, उसकी भी भाषा है उसके पास। मन विचार कर सकता है, उसकी भी भाषा है। लेकिन मन जब तीनों नहीं करता है, तब उसके लिए उसके पास कोई भाषा नहीं। और उसका कारण है। भाषा हो भी नहीं सकती, क्योंकि तब मन ही नहीं रह जाता। तब जो रह जाता है, वह मन नहीं है। इसलिए उसकी भाषा भी नहीं है।
और फिर भाषा के लिए जरूरी है कि दो हों। बोलने वाला हो, सुनने वाला हो।
तो जहां तक मन है, वहां तक भाषा है। क्योंकि जहां तक मन है, वहां तक मैं हूं और आप हैं।
लेकिन जहां मन नहीं रह गया, वहां न कोई सुनने वाला है, न कोई बोलने वाला है। वहां न मैं हूं, न आप हैं। वहां तो जो है, वही रह गया। वहां मैं तू का भेद भी गिर गया। तो वहां कौन बोले, कौन सुने? इसलिए वहां भाषा नहीं विकसित हो सकी। सत्य को बताने वाली कोई भाषा विकसित नहीं हो सकी। इसलिए जितने भी शास्त्र हैं, वे सत्य को कहने की कोशिशें हैं--असफल कोशिश, सफल कोशिश नहीं। अभी तक कोई कोशिश सफल नहीं हो पाई। और ऐसा नहीं है कि आगे सफल हो जाएगी। आगे भी सफल नहीं हो सकती। उसका कारण सिर्फ यही है कि मन के बाहर भाषा का उपाय नहीं। लेकिन आदमी तो भाषा से ही समझेगा। आदमी भाषा के बाहर कैसे समझेगा? चूंकि आदमी कहता है, भाषा में ही समझेंगे। तो फिर तीन रास्ते हैं। फिर कर्मयोग है, भक्तियोग है, ज्ञानयोग है। ये भाषा के भीतर कहने के उपाय हैं। लेकिन जो कहा जा रहा है, वह सत्य नहीं रह जाता। क्योंकि जो कहा जा रहा है, वह मन के खंडों से कहा जा रहा है। वह उतना ही झूठा हो गया, जैसे पानी के माध्यम में लकड़ी तिरछी हो जाती है। ऐसे ही मन के माध्यम में सत्य जो है, तीन खंडों में बंट जाता है और बंटते ही झूठ हो जाता है। वह अखंड होकर ही सत्य हो सकता है।
ऐसे ही जैसे मैं फूल को एक देखूं और फूल के पचास टुकड़े कर डालूं। और मैं कहूं कि फूल का जो सौंदर्य था--उन पचास टुकड़ों में से एक-एक टुकड़ा आपको दे दूं और आपको कहूं कि जो सौंदर्य मैंने जाना था, न सही पूरा, लेकिन पचासवां हिस्सा तो आप भी जान लेंगे।
नहीं, पचासवां हिस्सा भी आप नहीं जान सकेंगे, क्योंकि फूल का जो सौंदर्य था, वह अखंड फूल में था। पचास टुकड़े करके पचासवां हिस्सा आपके पास नहीं आएगा। आपके पास कुछ भी नहीं आएगा। जो पचासवां हिस्सा आएगा, उसमें सौंदर्य का कोई हिस्सा नहीं आएगा। बल्कि आप थोड़े हैरान भी होंगे कि यह आदमी पागल मालूम होता है। कहता है, फूल बड़ा सुंदर था! और मेरे हाथ में एक टूटी हुई पंखुड़ी आई है, जिससे कुछ भी पता नहीं चलता कि सुंदर क्या था? आप सोचेंगे अगर मैं कहूं कि यह पचासवां टुकड़ा है, तो आप सोचेंगे, जो मेरे पास है, अगर इसमें पचास का गुणा मैं कर दूं तो शायद सब ठीक हो जाएगा। तो आप अपनी पंखुड़ी में पचास का गुणा भी मन में कर लें, तब भी आप कहेंगे, सौंदर्य नहीं बनता। फूल पचास गुना नहीं था। फूल बात ही अलग थी। वह अखंड था।
एक आदमी है जिंदा। हम उसके टुकड़े-टुकड़े कर डालें। हड्डी-मांस फैला दें। कोई उसे प्रेम करता रहा हो, और कहता रहा हो कि बहुत सुंदर है, बहुत प्यारा आदमी है। फिर हम उसे ले आएं कि यह रहा तुम्हारा सुंदर और प्यारा आदमी। तो वह कहे कि यह तो वह आदमी ही नहीं है। इन हड्डियों को मैंने कभी प्रेम नहीं किया। इस चमड़े को मैंने कभी प्रेम नहीं किया। इस मांस-मज्जा को मैंने कभी प्रेम नहीं किया। मैंने तो जिसे प्रेम किया था, वह नहीं है।

और हम कहें कि वह पूरा का पूरा है, आप तराजू पर तौल लें, क्योंकि जितना वजन उस आदमी का था, उतना ही वजन इनका भी है। आप जाकर लेबोरेटरी में जांच करवा लें। उस आदमी में जितना अल्युमिनियम था, उतना अल्युमिनियम अब भी उसकी हड्डी में है। जितना फास्फोरस था, उतना फास्फोरस अब भी है। आप सारी जांच करवा लें। जितना खून था, वह सब खून मौजूद है। जितना मांस था, वह सब मांस मौजूद है।
फिर भी वह प्रेम करने वाला कहे कि क्षमा करिए, यह वह आदमी नहीं, क्योंकि वह आदमी एक अखंड इकाई था और ये खंड-खंड, टुकड़े हैं! और कुछ चीजें हैं, जो अखंड में ही प्रकट होती हैं और खंड में खो जाती हैं। वे खंड में होती ही नहीं।
मन खंड करने की प्रक्रिया है। मन खंडन की प्रक्रिया है। मन जो है वह,
वह चीजों को तोड़ता है।
उपयोगिता है उसकी इस जगत में, लेकिन उस जगत में नहीं। इस जगत में जहां
हम आदमियों के बीच जीते हैं, और दूसरे मनों के साथ जीते हैं, वहां इसकी उपयोगिता है। लेकिन जहां हमें परमात्मा के साथ जीना हो, वहां उसकी कोई उपयोगिता नहीं। वहां मन एकदम छोड़ देना पड़ता है।
जगत के लिए मन एक सार्थक साधन है, सत्य के लिए मन एक बाधा है। जगत के लिए मन एक सहयोग है, सत्य के लिए मन एक हिंडरेंस, एक अवरोध है।
और हमारी कठिनाई यह है कि हम सोचते हैं जब मन से जगत में काम चल जाता है, तो सत्य में काम क्यों न चले? हम उसी तरह की भूल कर रहे हैं, जैसे कि एक बैलगाड़ी जमीन पर चलती है, लेकिन बैलगाड़ी आकाश में नहीं उड़ सकती। तो हम अगर सोचें कि तब बैलगाड़ी जमीन पर चल जाती है, तो आकाश में क्यों न उड़ेगी? हमारा सोचना गलत है। असल में बैलगाड़ी जमीन पर चलती है, इसलिए आकाश में नहीं उड़ सकती। आकाश में उड़ने के लिए दूसरा ही वाहन होगा, क्योंकि आकाश का डायमेंशन बदल जाता है। बैलगाड़ी को चलना पड़ता है--अ से ब की तरफ, सीधी रेखा में, हॉरिजंटल, क्षितिज-रेखा में चलना पड़ता है। हवाई जहाज को उठना पड़ता है--नीचे अ से ब की तरफ, वर्टिकल, ऊपर की तरफ। बैलगाड़ी को जाना पड़ता है आगे की तरफ। हवाई जहाज को जाना पड़ता है ऊपर की तरफ। वह यात्रा बिल्कुल भिन्न है। हवाई जहाज का वाहन बिल्कुल भिन्न है।
संसार में जाना पड़ता है बाहर की तरफ, सत्य में जाना पड़ता है भीतर की तरफ।
संसार में संबंधित होना पड़ता है दूसरों से, सत्य में संबंधित होना पड़ता है अपने से।
सत्य में मन का कोई उपयोग नहीं है। और हमारे जो तीन मार्ग हैं-ज्ञान के, भक्ति के, कर्म के; वे मन के ही मार्ग हैं। इसलिए उन मार्गों से कोई कभी सत्य तक न पहुंचा है, न पहुंच सकता है।
एक मित्र ने पूछा है कि आप कहते हैं विचार मौलिक नहीं होता, ओरिजिनल नहीं होता, ज्ञान मौलिक नहीं होता। तो फिर जो जो आप बातें कह रहे हैं यानी मैं बातें कह रहा हूं, वे मौलिक हैं? उधार हैं? बासी हैं? वे कैसी हैं?
जब मैंने यह कहा कि विचार मौलिक नहीं होता, तब मैंने यह नहीं कहा कि मौलिक कुछ भी नहीं होता। मैंने कहा, विचार मौलिक नहीं होता। दृष्टि मौलिक हो सकती है। दृष्टि विचार नहीं है, दर्शन विचार नहीं है, अनुभूति विचार नहीं है। वही तो मैं कह रहा हूं, सत्य का अनुभव मौलिक होता है। सत्य का विचार मौलिक नहीं होता। जब आप सत्य को जानेंगे, तो वह जानना बिल्कुल ओरिजिनल है, बिल्कुल मौलिक है। वह उधार नहीं है, बासा नहीं है। इस बात को थोड़ी सी बारीकी से समझ लेना चाहिए।
जब आप सत्य को जानेंगे तो वह जानना तो मौलिक होगा, लेकिन जब आप सत्य के संबंध में जानते हैं, तब वह मौलिक नहीं होता। सत्य के संबंध में जानना, विचारों को ही जानना है। सत्य को जानना, विचार को जानना नहीं है। सत्य की अनुभूति तो सदा मौलिक होती है, लेकिन सत्य के शास्त्र कभी मौलिक नहीं होते।
लेकिन दो बातें हैं। अगर मैं सत्य को जान लूं और आपसे कहने आऊं, तो मेरी प्रतीति तो मौलिक होगी, लेकिन मेरी भाषा मौलिक नहीं हो सकती। भाषा तो

मुझे वही उपयोग करनी पड़ेगी, जो आप उपयोग करते हैं। और इसीलिए तो कठिनाई है सत्य को कहने में, क्योंकि सत्य है सदा ताजा और भाषा है सदा बासी। इसलिए ताजे को जब हम बासी में डालते हैं तो बड़ी मुश्किल हो जाती है। तब कहने में बड़ी मुश्किल हो जाती है। फिर जरूरी नहीं है कि ताजा आप तक पहुंचे। आप तक कैसे पहुंचेगा? आप तक तो बासे शब्द ही पहुंचेंगे। इसलिए तो मैं कहता हूं, मेरे सुनने से, किसी और के सुनने से सत्य नहीं मिल जाएगा, सिर्फ बासे शब्द मिलेंगे।
सत्य अगर खोजना हो तो आपको, आपको ही उस जगह खड़ा होने पड़ेगा, जहां सत्य मिलता है।
फिर मैं किसलिए बोल रहा हूं? कोई किसलिए बोल रहा है? कोई किसलिए लिख रहा है? लिखने और बोलने का उपयोग यह नहीं है कि उससे आपको सत्य मिल जाएगा। लिखने और बोलने का एक ही उपयोग है कि अगर आपको तड़प और प्यास भी मिल जाए तो बस काफी। अगर आपको यह खयाल भी आ जाए--मेरी सारी परेशानी से--बोलने की, समझाने की, मेरी आंखों से, मेरे उठने-बैठने से, मेरी इस चुप्पी से--अगर इतना, सिर्फ प्यास भी जग जाए कि हो सकता है, यह आदमी कहीं पहुंचा हो। शायद कोई ऐसी जगह हो, यह खयाल भी आ जाए। और आप उस खयाल से, उस प्यास से किसी खोज में चले जाएं तो बात काफी हो गई।
अब तक जो भी कहा गया है, उससे सत्य नहीं मिला। सत्य की प्यास भी जग जाए
तो काफी है। और प्यास जग सकती है। मैं जो बोल रहा हूं, वह तो भाषा होगी। वही भाषा होगी, जो हम हजारों साल, लाखों साल से, उपयोग कर रहे हैं। वह बासी है। भाषा कैसे ताजी हो सकती है? लेकिन यह हो सकता है कि वह भाषा मैंने किताबों से इकट्ठी की हो और मेरे पास कोई भी अनुभव न हो, तब उस भाषा के पीछे भी कोई मौलिक अनुभव न होगा। तब वह भाषा मुर्दा होगी, वह लाश होगी।
एक लाश और जिंदा आदमी में क्या फर्क होता है? लाश और जिंदा आदमी में इतना ही फर्क होता है कि लाश सिर्फ लाश होती है। उसके पास और कुछ नहीं होता। जिंदा आदमी में भी लाश होती है, लेकिन और कुछ भी होता है, भीतर एक प्राण भी होता है। अगर मैं शास्त्रों से शब्दों को उठाकर आपसे कह दूं तो वे लाश होंगे--मरे हुए।
लेकिन अगर मेरा भी अनुभव हो तो उनके भीतर एक प्राण भी होगा, एक जिंदा बात भी होगी। लेकिन वह जिंदा बात आप तक पहुंचेगी? बहुत मुश्किल है। हो सकता है, आप तक सिर्फ शब्द ही पहुंचें।
बहुत कठिनाई है, सदा की कठिनाई है। कभी भी हल नहीं होगी। और कृपा है बड़ी परमात्मा की कि हल नहीं होनी चाहिए, क्योंकि अगर मेरे शब्दों से आपको सत्य मिल जाए तो वह सत्य इतना सस्ता होगा कि उसकी कोई कीमत न रह जाएगी। नहीं, वह सत्य आपको ही खोजना पड़ेगा, क्योंकि उसको खोजने में, उसकी यात्रा में, उसमें डूबने में, उस तक जाने में, जाने की यात्रा में, मिटने में--उस सबमें जो होगा, वही, वही बहुमूल्य है। अगर वह बासा उठा कर हाथ में दिया जा सके बेईमानी हो जाए, अर्थहीन हो जाए।
एक मां अपने बच्चे को पैदा करती है और एक मां किसी दूसरे के बच्चे को गोद ले लेती है। कभी फर्क अनुभव किया है कि दोनों में क्या फर्क है? मां जब बच्चे को पैदा करती है, तो प्रसव की पीड़ा से गुजरती है। असल में उधार बच्चा ले लेना ज्यादा आसान है। प्रसव की पीड़ा से बच जाते हैं। लेकिन उधार बच्चा उधार ही है। और मां कभी मां नहीं बन पाती। बस दिखावा पैदा होता है। बेटा उसे मां कहने लगता है, वह भी अपने को मां मानने लगती है!
लेकिन, एक बहुत बहुमूल्य अनुभव जो मां होने का है, उसे कभी नहीं मिल सकता। कैसे मिल सकता है? क्योंकि मां होना, बेटे को उधार लेने से कैसे फलित हो सकता है? मां होने में वह नौ महीने की पीड़ा भी सम्मिलित है, वह प्रसव भी सम्मिलित है, बच्चे को जन्म देने का कष्ट भी सम्मिलित है। उस सारे कष्ट के आधार के बिना मां होने की स्थिति का जन्म ही नहीं हो सकता। ध्यान रहे, जब बेटा पैदा होता है, तब सिर्फ बेटा ही पैदा नहीं होता, साथ में मां भी पैदा होती है। मां को भी पैदा होना पड़ता है। इधर बेटा पैदा होता है, उधर पीछे मां पैदा होती है। यह घटना एक साथ घटती है, हम आमतौर से समझते हैं कि बेटा ही पैदा हुआ, इसलिए भूल हो जाती है। तो हम सोचते हैं कि

बेटे को तो उधार भी लिया जा सकता है--मां बन जाएगी। मां कैसे पैदा होगी? बेटे के पैदा होने के क्षण में मां भी पैदा होती है। इसलिए उधार बेटे से काम नहीं चल सकता। धोखा हो सकता है।
सत्य उधार नहीं लिए जा सकते। सत्य को पैदा करने की प्रसव पीड़ा से गुजरना जरूरी है।
अनुभूतियां मौलिक ही होती हैं।
सिर्फ अनुभूतियां ही मौलिक होती हैं, विचार मौलिक नहीं होते। लेकिन अनुभूति को भी कहना हो तो विचार का उपयोग करना पड़ता है। लेकिन तब विचार केवल वाहन है। वाहन के भीतर जो बैठा है, उसे अगर आप पहचानेंगे तो मौलिक का पता चलेगा। और अगर वाहन को ही पहचानेंगे और भीतर को नहीं पहचान पाएंगे तो आपको भी पता लगेगा कि यह तो वाहन बहुत बार देखा है, इस वाहन में तो कोई बात नहीं। शब्द तो बहुत बार सुने हैं, शास्त्र बहुत बार पढ़े हैं।
वही तो कहा जा रहा है, जो कहा गया था। गीता में भी वही है, कुरान में भी वही है, बाइबिल में वही है, तब आप खो गए। जब मैं कह रहा हूं, तो जो कह रहा हूं, जिन शब्दों और जिन विचारों से कह रहा हूं, वे तो मौलिक नहीं हो सकते। वे कभी मौलिक नहीं होते। अगर वे मौलिक हों तो आप समझ ही न पाएंगे। मैं एक ऐसी भाषा बोल सकता हूं, जो बिल्कुल मौलिक हो। मौलिक भाषा का एक ही मतलब हुआ कि जिसको मैं ही समझ सकता हूं--और कोई न समझ सके। क्योंकि अगर कोई और समझता है, तो बासी हो ही जाएगी, क्योंकि किसी और को भी पता है।
तो मौलिक भाषा तो सिर्फ पागल ही बोल सकते हैं। पागल मौलिक भाषा बोलते हैं, इसलिए तो उनको पागलखाने में बंद करना पड़ता है, क्योंकि अपनी भाषा वे अकेले ही समझते हैं। कोई और नहीं समझता। मौलिक भाषा बोलनी हो तो पागल होना जरूरी है, क्योंकि उसको आप ही समझेंगे। और जिस भाषा को आप ही समझते हैं, उसको बोलने की भी क्या जरूरत है? उसके बिना बोले भी चल सकता है। उसे कोई समझेगा भी?
भाषा तो बासी होगी, क्योंकि भाषा हमारे बीच का संबंध है। हम सबको समझनी चाहिए। तभी उसका कोई अर्थ है, अन्यथा वह व्यर्थ है। लेकिन अनुभूति मौलिक हो सकती है और होनी चाहिए। अनुभूति ही मौलिक होती है। लेकिन अनुभूति और विचारों में ऐसी ही भूल हो जाती है, जैसे अपने बेटे में और उधार बेटे में भूल हो जाती है।
मैं एक घर में मेहमान होता हूं। उस घर की जो महिला है, उसको बेटा नहीं हुआ। तो उसने, थोड़े-बहुत नहीं बहुत करोड़पति महिला है--उसने सत्तर अनाथ बच्चे पाल रखे हैं! थोड़े-बहुत नहीं सत्तर उसने... , बच्चे बढ़ाती ही चली जाती है! कोई भी अनाथ बच्चा आ जाए, तो उसको पालना शुरू कर देती है। पूरा घर जो है उनका, एक अनाथालय हो गया! लेकिन फिर भी वह औरत अभी मां नहीं बन पाई! सत्तर बच्चे भी मां नहीं बना पाए!
जब मैं उनके घर मेहमान हुआ तो मैंने कहा कि कब रुकेगी यह यात्रा? सात
सौ बच्चे ले लो तो भी मां नहीं बन पाओगी। मैंने कहाः जब तुमने एक बच्चा लिया, तब तुम मां नहीं बन पाईं, तब तुमने दूसरा ले लिया! अब सत्तर बच्चे इकट्ठे हो गए हैं घर में, लेकिन तुम अभी भी मां नहीं बन पाईं! तुम सात सौ भी ले लो तो भी मां नहीं बनोगी।
उस महिला की आंख में आंसू आ गए, उसने कहा, यह आप क्या कहते हैं! यही तो मुझे अनुभव होता है। बच्चे तो मैंने इतने ले लिए, लेकिन मां होने का सुख मुझे नहीं मिल पाया।
मां को जन्म लेना पड़ता है। वह बेटे के साथ ही पैदा होती है। उधार बेटे काम नहीं कर सकते। उधार सत्य भी काम नहीं कर सकते। और विचार और ज्ञान उधार हैं। इसलिए मैं कहता हूं, ज्ञान मार्ग नहीं है। इसे थोड़ा और समझ लें।
सब ज्ञान उधार हैं। जानना उधार नहीं है, ज्ञान उधार है। जानने और ज्ञान में थोड़ा फर्क कर लेना। ज्ञान का मतलब नालेज है और जानने का मतलब नोइंग। जानने की मेरी जो शक्ति है, वह तो मौलिक है। लेकिन जो मैंने ज्ञान इकट्ठा कर लिया है, वह सब उधार है। जानने की शक्ति तो प्रत्येक व्यक्ति के पास अपनी है, लेकिन ज्ञान जो उसने इकट्ठा किया है, वह अपना नहीं है।

और मजे की बात यह है कि जानने की शक्ति उतनी ही कम हो जाती है, जितना ज्ञान हम इकट्ठा कर लेते हैं। इसलिए पंडित का ज्ञानी होना असंभव है। इतना जान लेता है वह दूसरों से, इतना उधार कर लेता है; वह इतना इकट्ठा कर लेता है कि उसकी अपनी जानने की क्षमता दब जाती है। फिर कभी वह जान ही नहीं पाता, क्योंकि जानने के पहले ही उसे बहुत कुछ पता होता है! उसे अपनी तरफ से जानने की आवश्यकता ही नहीं रह जाती! वह सदा दूसरों की आंख से जान लेता है!
अगर कोई सवाल उसकी जिंदगी में उठता है तो उसके पास उत्तर पहले से होते हैं, सवाल पीछे उठता है! अगर उससे कोई पूछे आत्मा है? तो उसे जानना नहीं पड़ता। वह कहता है, "है।" क्योंकि उपनिषद में लिखा है, क्योंकि गीता कहती है, क्योंकि कृष्ण कहते हैं, महावीर कहते हैं--आत्मा है। यह उसका उत्तर अपना नहीं है। ये उत्तर उधार और बासे हैं। और मजा यह है कि उसने कभी प्रश्न ही ईमानदारी से नहीं पूछा, नहीं तो अपना उत्तर भी आ सकता था। उसने पूछा नहीं! उसने पूछाः आत्मा है? यह पूछने के पहले भी वह जान रहा है कि है, क्योंकि गीता कहती है, क्योंकि बुद्ध कहते हैं! बुद्ध गलत कहेंगे? गीता झूठ कहेगी? मैं भी नहीं कहता कि वे गलत कहते हैं। लेकिन वह बुद्ध कहते हैं। वे जो भी कहते हैं, अपने लिए कहते हैं। वह तुम्हारे लिए सही नहीं, मेरे लिए सही नहीं। वह उनके लिए सही है, वे जानकर कहते हैं।
बुद्ध के पास एक आदमी आता है, वह गाय चराने वाला एक चरवाहा। उसने बुद्ध से कहा कि मुझे भी दीक्षा दे दो। बुद्ध ने कहा, तेरी मर्जी है तो आ जा, लेकिन मैंने तेरे संबंध में एक खबर सुनी है। मैंने सुना है कि तू नदी के किनारे बैठ कर दूसरे की गाय-भैंसें गिना करता है। उसने कहाः हां, यह मेरी सदा की आदत है। मुझे गांव भर की गाय-भैंसें की संख्या मालूम है। बुद्ध ने कहाः तेरी अपनी भी कोई गाय-भैंस है?
उसने कहाः यह तो मुझे खयाल ही नहीं आया! दूसरों की गिनती में मैं इतना उलझा रहा कि यह सवाल ही नहीं उठा कि अपनी भी कोई गाय-भैंस है। और सारे गांव की गाय-भैंसें गिनते-गिनते मुझे तो ऐसा लगने लगा है कि सब गाय-भैंसें मेरी हैं। आप भी कैसे सवाल उठाते हैं? यह तो मेरे मन में सवाल ही नहीं उठा। बुद्ध ने कहाः दूसरों की गाय-भैंसें कितना ही गिन, उससे तेरी गाय-भैंस नहीं हो जातीं। हां, इतना हो सकता है कि दूसरे की गाय-भैंसें गिनते-गिनते तुझे सवाल ही भूल जाए कि अपनी भी कोई गाय-भैंस है!
बुद्ध ने कहाः दीक्षा तो तू ले ले, लेकिन ध्यान रख, दूसरों के सत्यों
को मत गिनना। नहीं तो पुरानी आदत गाय-भैंस गिनने की यहां ले आए और गिनता रहे कि बुद्ध क्या कहते हैं? और कृष्ण क्या कहते हैं? और राम क्या कहते हैं? इसकी गिनती में मत पड़ जाना। तू क्या कहता है? तेरा भी कुछ कहना है इस जगत में? तू भी पैदा हुआ है तो कुछ कहने योग्य तेरे पास है?
अगर हम अपने से पूछें कि मेरे पास भी कुछ कहने योग्य है, जो मैंने जाना? तो हम एकदम दीन-दरिद्र मालूम पड़ेंगे। हमारे पास कहने योग्य कुछ नहीं होता। हमने कुछ जाना नहीं। इस दरिद्रता को छिपाने के लिए हम दूसरों के शब्दों को दोहराए चले जाते हैं, रोज सुबह उठ कर गीता पढ़ लेते हैं, कंठस्थ कर लेते हैं, श्लोक दोहराए चले जाते हैं! और धीरे-धीरे यह भूल ही जाते हैं कि हम दूसरे की गाय-भैंस गिन रहे हैं! कृष्ण की गाय-भैंस गिनने से क्या फायदा हो सकता है? कृष्ण को हुआ होगा, मुझे क्या हो सकता है? हां, इतना हो सकता है कि मैं भूल जाऊं कि अपना भी सवाल है, और अपना ही उत्तर चाहिए। ध्यान रहे, सवाल मेरा और उत्तर आपका, काम नहीं करेगा। सवाल मेरा है तो उत्तर भी मेरा चाहिए। एकाध ऐसा सवाल है, जिसका मेरा उत्तर हो; जो मेरी जिंदगी से आ गया हो, जो मेरे भीतर से उठा हो, जो मेरे प्राणों से निकला हो, जिसका बीज मेरे भीतर अंकुर बना हो, जो मेरा हो? अगर मेरे पास अपना कोई उत्तर नहीं है तो सारी दुनिया के उत्तर इकट्ठे करके भी कुछ भी नहीं होने वाला। मैं दीन ही रहूंगा, दीन ही मरूंगा--गरीब, भिखमंगा।
और ध्यान रहे, धन के संबंध में भिखमंगा होना, इतना बुरा नहीं। क्योंकि भिखमंगा आखिर अगर आपके द्वार पर हाथ जोड़कर खड़ा हो जाता है तो ज्यादा से ज्यादा अपना पेट ही भरता है न, दो रोटी ले लेता है। लेकिन ज्ञान के संबंध में जो भिखमंगे हैं, वे अपनी आत्मा को भी भर लेते हैं!

हम सड़क पर भीख मांगते आदमी को तो कहते हैं, बुरा है। तेरे पास हाथ-पैर मजबूत हैं, क्यों भीख मांगता है? लेकिन कभी हम अपने संबंध में नहीं सोचते कि मेरी चेतना पूरी ठीक है--मैं क्यों भीख मांग रहा हूं? क्यों कृष्ण के, राम के, बुद्ध के दरवाजे पर खड़ा हूं?
और ध्यान रहे, पेट भर लेना इतना बुरा भी नहीं है, क्योंकि पेट यहीं छूट जाएगा। आत्मा भर लेना बहुत बुरा है, क्योंकि वह आगे भी साथ चलने वाली है। मैंने भीख मांग कर शरीर में खून बनाया था, कि कमाकर खून बनाया था, मरघट पर दोनों शरीर एक से जल जाएंगे। लेकिन जो आत्मा, मैंने भीख मांगकर भर ली है, वह मेरे साथ होगी। लेकिन सरल दिखता है वह उपाय।
ज्ञान मार्ग बड़ा सरल दिखता है। दिखता यह है कि ज्ञान इकट्ठा कर लो। दूसरों ने जान लिया, हमें जानने की जरूरत नहीं! हम उनको, उनको याद कर लें, कंठस्थ कर लें, हमने भी जान लिया! उस ज्ञान में जो दब जाएगा, उसकी जानने की, नोइंग की क्षमता धीरे-धीरे नष्ट हो जाती है।
जो आदमी दूसरों के पैरों से चलेगा, उसके अपने पैर अगर चलना भूल जाएं
तो आश्चर्य तो नहीं! और जो आदमी दूसरों की आंखों से देखेगा, अगर उसकी अपनी आंखें देखना बंद कर दें तो इसमें कुछ हैरानी की बात नहीं। अगर अपनी आंखों से देखना है तो अपनी ही आंखों से देखना पड़ेगा। और अगर अपने पैरों में चलने की ताकत बनाए रखनी है तो अपने ही पैरों से चलना पड़ेगा। और अगर अपनी चेतना को यात्रा पर ले जाना है तो अपनी ही चेतना को ले जाना पड़ेगा।
ज्ञान ने बड़ा धोखा दिया है। और आश्चर्य तो यह है कि ज्ञान का धोखा इतना सूक्ष्म है कि पता नहीं चलता। ज्ञानी और पंडित में फर्क ही नहीं कर पाते! पंडित अक्सर ज्ञानी होने का धोखा दे जाता है। ऐसा नहीं कि दूसरों को दे जाता है। दूसरों को दे दे, तो कोई हर्ज नहीं है, अपने को भी दे जाता है! उसको सबसे बड़ा धोखा खुद को हो जाता है! उसे लगता है कि मैंने तो जान लिया! कितने लोग मेरे पास आते हैं, उन्हें देख कर मेरा हृदय रोने लगता है।
वे जो बातें कर रहे हैं, वे सारी की सारी बातें उन्होंने कहीं से सीख ली। और उन्हें इस भांति कर रहे हैं कि जैसे वे बातें उनकी हैं! और अगर उन्हें झिंझा.ेडो, हिलाओ, और उनसे कहो कि ये बातें आपकी नहीं तो उनका मन बड़ा नाराज होता है! नाराज होगा ही। अगर किसी आदमी को यह खयाल हो कि मैं अमीर हूं, और हम बात दें कि तुम्हारे खीसे खाली हैं तो वह नाराज होगा।
और वे गुरुओं के पास जा रहे हैं--इसलिए कि उनका ज्ञान और बढ़ जाए; और एक्युमुलेट कर लें, और संग्रह कर लें; और कुछ जान लें। एक गुरु से दूसरे गुरु के पास जा रहे हैं। दूसरे गुरु से तीसरे गुरु के पास जा रहे हैं! गुरुओं को खोजते फिर रहे हैं! कहां से क्या मिल जाए, उसे इकट्ठा कर लें! और फिर सब कचरे को इकट्ठा करके वह सोचेंगे अपने पास भी कोई संपत्ति है! कल वे भी एक गुरु हो जाएंगे! और उनके पास भी लोग आने लगेंगे! और यह वीसियस सर्कल, बहुत लंबा है। नहीं, ज्ञान इकट्ठा कर लेने से कोई ज्ञान को उपलब्ध नहीं हो सकता।
और बुद्धि सिर्फ इकट्ठा कर सकती है, जान नहीं सकती। बुद्धि सिर्फ स्मृति बना सकती है, जान नहीं सकती। इसलिए बुद्धि सिर्फ एक यंत्र है, एक मैकेनिकल डिवाइस। और बहुत आश्चर्य नहीं है कि अब तो कंप्यूटर बन गया। अब तो बहुत जल्दी आपको अपने भीतर बुद्धि रखने की भी जरूरत न होगी, खीसे में कंप्यूटर भी रख सकते हैं। जरूरी नहीं होगा कि भीतर याद करें चीजों को। एक कंप्यूटर को फीड कर देंगे ज्ञान और वह जवाब दे देगा! जब भी सवाल उठे कि आत्मा है? अपने कंप्यूटर को खीसे से निकाल कर पूछ लेना--आत्मा है? वह कहेगा, है! गीता में यह लिखा है, उपनिषद में यह लिखा है! वह सब बता देगा। आप प्रसन्न होकर कंप्यूटर को खीसे में रख लेना और अपनी यात्रा पर निकल जाना। बुद्धि भी यही कर रही है। बुद्धि कंप्यूटर है। बुद्धि स्मरण का एक उपाय है, जिसमें आपने सब स्मरण कर रखा है। कभी अपने खयाल किया कि आप बुद्धि नहीं हैं? आप बुद्धि से बहुत अलग हैं। बहुत बार ऐसा हो जाता है, सुबह आप मुझसे मिलने आए, और आप मुझसे पूछते हैं, पहचाना? मैं सोचता हूं, देखा तो है कहीं। कहां देखा होगा? मैं अपने कंप्यूटर से पूछता हूं, अपनी बुद्धि से पूछता हूं--कहां देखा होगा?

मैं तो अलग हूं--जो चक्कर में पड़ गया है। जिस चक्कर में पड़ गए कि इस आदमी को कहीं देखा कि नहीं देखा! अब मैं अपने कंप्यूटर से, अपनी मशीन से पूछता हूं, जल्दी खोजो इस आदमी को, कहीं देखा हो? वह आदमी कह रहा है, पहचाने नहीं अभी तक आप मुझे! अब मैं मुश्किल में पड़ गया हूं। मैं अपनी बुद्धि से कहता हूं, जल्दी पहचान। यह आदमी कहीं देखा है, यह चेहरा खयाल में आता है--यह बाल, यह शक्ल, यह नाक। बुद्धि कहती है, हां, कहीं देखा है, मैं खोज करती हूं। वह बुद्धि एक अलग यंत्र है, जो जल्दी से खोजबीन करेगा। और आपने बहुत जल्दी की तो वह गड़बड़ा जाएगा। यंत्र के साथ जल्दी नहीं करनी चाहिए, नहीं तो गड़बड़ हो जाती है। अगर आपने बहुत ही जल्दी की और कहा कि जल्दी पहचानिए तो सब गड़बड़ हो जाएगा। अगर आपने थोड़ी सी मुझे फुरसत दी, मैंने कहा--और मैं कहूं कि बैठिए-बैठिए, जल्दी क्या है? पहचानता हूं, चाय पी लीजिए। दूसरी बातों में आपको लगाया, तब तक अपना कंप्यूटर काम कर ले! क्योंकि उसके पास हजारों स्मृतियों का जाल है, उसमें उसको खोजना पड़ेगा। लाखों चेहरे हैं, लाखों नाम हैं, उसको जल्दी से खोजना पड़ेगा कि यह कौन आदमी है? जल्दी से उसकी शक्ल का मिलान करो। वह यंत्र काम करेगा।
इसलिए अक्सर ऐसा होता है कि अगर आपको किसी का नाम न याद आए तो एकदम से नाम याद मत करिए, नहीं तो बड़ी दिक्कत हो जाएगी। थोड़ी देर के लिए कुछ और काम करने लगिए। बुद्धि थोड़ी देर में काम करके जवाब दे देगी कि यह रहा नाम! आप बगीचे में चले जाइए, गड्ढा खोदने लगिए, चाय पीने लगिए, सिगरेट पीने लगिए, कुछ भी करिए। बुद्धि को थोड़ी देर के लिए छोड़ दीजिए, ताकि यंत्र जल्दी से अपना काम पूरा कर ले। उसको वक्त लगेगा, समय लगेगा। मशीन है, मशीन को वक्त लगता है-वह एकदम से कैसे उत्तर दे दे! वह थोड़ी देर में बता देगा कि यह नाम रहा। अक्सर ऐसा होता है कि दिन में हम याद नहीं कर पाते, रात सोते वक्त याद आ जाता है! दिन भर याद नहीं कर पाते, रात नींद में याद आ जाता है! सुबह होते से पता चलता है, सब ठीक हो गया!
मैडम क्यूरी, जिसको नोबल प्राइज मिला, जिन सवालों के हल करने पर उसको बड़ी प्रसिद्धि मिली, वे सवाल उसने सब नींद में हल किए! क्योंकि जब वह सवाल हल करने के लिए वह बहुत उत्सुक हो जाती तो मशीन गड़बड़ा जाती! क्योंकि अति तीव्रता के साथ मशीन मुश्किल में पड़ जाती है। आप कहते हैं, जल्दी करो! मशीन तो अपनी व्यवस्था से ही काम कर सकती है।
तो वह सो जाती थक कर रात। जब उसे एक दफा तरकीब मालूम पड़ गई उसने फिर पूरी जिंदगी उपयोग किया। वह रात, शाम तक थक जाती, सवाल हल करते। सवाल हल न होता कागज-कलम बिस्तर के किनारे रख कर सो जाती। रात नींद में उठती और जवाब लिख देती और फिर सो जाती!
आपको जान कर हैरानी होगी कि दुनिया के बहुत कठिन सवालों का जवाब आपकी बुद्धि खोज ला सकती है, अगर उसको फीड किया गया है। अगर उसको पहले से, उसको भोजन दे दिया गया है वह सवाल खोज लाएगी। भोजन ऐसा है, जैसे हम बच्चों को सिखा रहे हैं, जो हम स्कूल में सिखा रहे हैं--वह भोजन है! हम बच्चे को सिखा रहे हैं--कि एक से नौ तक की गिनती होती है, एक से दस तक गिनती होती है। दो और दो चार होते हैं। तीन और तीन का गुणा करने से नौ होता है। ये सब हम फीड कर रहे हैं। फिर कल हम उससे पूछते हैं कि तीन सौ में तीन सौ का गुणा करने से कितना होता है? वह फौरन उत्तर निकाल लाता है, क्योंकि उसके पास सारा यंत्र तैयार है। कंप्यूटर भर दिया गया है। वे सब उत्तर तैयार हैं उसके पास। वह उत्तर खोज लाता है।
बुद्धि एक यंत्र है। और आप बुद्धि से बिल्कुल अलग हैं।
मेरे एक मित्र हैं, वह ट्रेन से गिर पड़े। सिर को चोट लग गई और सारी स्मृति खो गई। यंत्र खराब हो गया। वे अब भी ठीक हैं, लेकिन हम उनको अब ठीक नहीं मानते। अब उनको कोई ठीक नहीं मानता। मैं उनके पास गया देखने, बचपन में मेरे साथ पढ़े थे। उनके गांव गया, उनके घर गया। वह मुझे देखने लगे, जैसे उन्होंने मुझे कभी न देखा हो, क्योंकि वह यंत्र टूट गया, जिसमें रिकार्ड। स्मृति उनकी खराब हो गई। वह मुझे पूछने लगे, आप कौन हैं? मैंने कहाः मुझे पहचाने नहीं? उन्होंने कहाः मैं किसी को भी नहीं पहचानता?

राहुल सांकृत्यायन एक बड़े पंडित थे, महापंडित थे। आखिरी-आखिरी वक्त दिमाग का कंप्यूटर खराब हो गया। दिल्ली के अस्पताल में बंद थे। बड़े पंडित थे। बड़े पंडितों के कंप्यूटर कभी भी खराब हो सकते हैं, क्योंकि ज्यादा काम लेना पड़ता है। इतना काम लिया, इतनी किताबें लिखीं, इतनी किताब लिखीं, इतना काम लिया कि दिमाग जवाब दे गया। कंप्यूटर फिर उसकी सीमा के बाहर बात चली गई। आखिर में हालत उनकी यह हो गई थी कि उन्हें अ ब स फिर से सीखना पड़ा! क ख ग; एक और एक दो, दो और दो चार--ये आखिर में मरते वक्त फिर से सीख रहे थे! क्योंकि सब भूल गए, वह स्मृति जवाब ही दे गई! मशीन ने काम ही बंद कर दिया! लेकिन वे थे।
आप इस बात को ठीक से समझ लेना कि आप जिसको अपना ज्ञान कहते हैं, वह एक यांत्रिक संग्रह है आपके पास, जिसका आपको उपयोग करना पड़ता है। वह जरूरी है। जिंदगी के काम के लिए बहुत जरूरी है। अभी मुझे घर वापस लौटना है तो मुझे पता होना चाहिए कि मैं कहां ठहरा हुआ हूं, नहीं तो मैं वापस कैसे लौटूंगा। बिल्कुल जरूरी है, लेकिन परमात्मा के पास पहुंचने के लिए उस यंत्र की कोई भी जरूरत नहीं है, क्योंकि परमात्मा के पास पहुंचने के लिए-- इसलिए जरूरत नहीं है उस यंत्र की, कि परमात्मा का ना तो कोई पता है, न तो कोई ठिकाना है, न तो कोई मकान है! और परमात्मा के पास से जब हम आए हैं उससे, हम उसके पहले हैं। कंप्यूटर बाद में विकसित हुआ है। वह जो हमारा दिमाग है, वह बहुत बाद का विकास है। वह जिंदगी की जरूरत के लिए विकास है।
लेकिन हमें पीछे लौटना है, ओरिजिनल सोर्स पर लौट जाना है, जहां से हम
आए हैं। परमात्मा वहां है। तो सब छोड़ कर लौट जाना है। वहां कोई इस यंत्र की जरूरत नहीं। फिर यह यंत्र वहां काम भी नहीं कर सकता, क्योंकि परमात्मा की हमारी कोई स्मृति नहीं, उससे हमारा कभी मिलना नहीं हुआ। यह यंत्र तो वही काम कर सकता है, जिससे हमारा मिलन हुआ हो, पहचान हुई हो।
अगर परमात्मा आज आपको मिल जाए और कंधे पर हाथ रख कर कहे कि भाई जान! पहचाने? तो आप लौटकर कहेंगे, नहीं पहचाने! आप अपने कंप्यूटर से पूछेंगे, पहचाने? वह कहेगा नहीं पहचाने, यह आदमी कभी मिला नहीं, यह कौन? हां, अगर कृष्ण भगवान मिल जाएं तो आप पहचान लेंगे, क्योंकि वह कंप्यूटर में भरे हुए हैं। वे हम मंदिर में देख रहे हैं, कि बांसुरी बजाते हुए खड़े हैं। अगर वह ऐसी बांसुरी बजाते मिल जाएं तो आप पहचान लेंगे। कि हां, यह आदमी पहचाना मालूम पड़ता है। कंप्यूटर उत्तर दे देगा। हां, यह आदमी ठीक लग रहा है, जरा मोरपंख तिरछा लगाया है, वैसे बाकी ठीक है।
लेकिन क्राइस्ट को मानने वाला न पहचान पाएगा! वह कहेगा, यह कौन आदमी है? कैसा मोरपंख लगाया है? यह क्या मामला है? यह कौन है?
आपको अगर जरथुस्त्र मिल जाएं, आप न पहचान पाएंगे, लेकिन जरथुस्त्र को मानने वाले पहचान जाएंगे।
नहीं, जिसको आप पहचान लें, वह भगवान नहीं है, क्योंकि भगवान की हमारे पास कोई स्मृति ही नहीं है। हमारे कंप्यूटर ने कभी भगवान जाना ही नहीं। हमारी स्मृति के यंत्र के पास भगवान की कोई स्मृति नहीं, जिसको कि बता दें, हां, यह रहा भगवान। और अगर आप पहचान लें, रिकग्नाइज कर लें कि ठीक है, यही है, तो आप समझ लेना कि यह भगवान नहीं है। यह आपकी स्मृति का, आपके ज्ञान का ही कुछ मिला-जुला खेल है। जिसको आप बिल्कुल न पहचान पाएं, जिसके सामने खड़े होकर कंप्यूटर जवाब दे दे कि बिल्कुल नहीं पहचान में आता। इसको तो कभी जाना ही नहीं, यह कौन है? सारे भीतर आप खोजें कोई उत्तर न आए, जिसको रिकग्नाइज न कर सकें आप, पहचान न सकें। तब आप समझना कि किसी दरवाजे पर आ गए, कहीं पहुंचे, किसी मंदिर पर, जहां कि अनजान, अज्ञात, अननोन खड़ा है। जिसको हम पहचानते ही नहीं।
भगवान को पहचाना नहीं जा सकता, क्योंकि भगवान को हम जानते नहीं। उसे
हम कभी नहीं पहचानते। इसलिए अगर कोई आदमी आपके पास आए और कहे कि हां मैंने भगवान को पा लिया है तो आप समझना कि उसने उन्हीं भगवानों को पा लिया होगा, जो उसकी स्मृति पहचान लेती है। इसलिए मैं आपसे कहता हूं, भगवान की पहचान के लिए स्मृति, बुद्धि और ज्ञान का कोई यंत्र काम नहीं देगा। वह अज्ञात है। वह सदा अज्ञात है। इसलिए तो रहस्य है।

रहस्य और मिस्ट्री का मतलब क्या होता है? मतलब यह होता है कि जिसको हम
न पहचान पाएं। जिसके सामने हम खड़े हो जाएंगे अवाक--आंखें खुली रह जाएंगी, झपकना मुश्किल हो जाएगा। मन कहेगा, नहीं पहचानते। बुद्धि कहेगी, नहीं जानते। भाव कहेंगे, कोई संबंध नहीं। कर्म कहेगा, हमारी, हमारी कोई सामर्थ्य नहीं। सारा व्यक्तित्व कहेगा--कुछ भी नहीं; हम कुछ जानते नहीं-- पहचानते नहीं, यह कौन है? यह क्या है? यह कैसा है? और सब आपका यंत्र एक दम ही थक कर खड़ा हो जाएगा। कोई जवाब नहीं आएगा। जब आपका अहंकार कहेगा, अपनी तो कोई गति नहीं, तभी आपका सिर झुक जाएगा उन चरणों में। उस अज्ञात के चरणों में आप गिर पड़ेंगे।
समर्पण आपके करने से नहीं होगा। आपके सब यंत्र जवाब दे देंगे, आपका कोई यंत्र सहयोगी न होगा, आप अचानक पाएंगे कि चरणों में गिर गए हैं--अज्ञात के। खो गया वह आदमी, जो आप थे--यंत्रों का जोड़। और बच गया सिर्फ वही, जो सारे यंत्रों के पीछे छिपा था। वही बच गया।
इसलिए जो जान लेता है परमात्मा को, वह कहेगा नहीं कि मैंने जान लिया। नहीं कहेगा! और अगर कहता हो तो उसने जाना नहीं होगा। अगर आप उसे पूछने जाएंगे कि बताओ, परमात्मा को जान लिया? तो हो सकता है, वह हंस दे। हो सकता है, चुपचाप आपकी तरफ देखे। लेकिन यह न कह सकेगा कि हां, जान लिया, क्योंकि हां कहने की भी तो स्थिति हमारी नहीं है। हां कौन कहेगा उसके लिए? कौन सेंकशन देगा? कौन सर्टीफिकेट देगा उसके लिए कि हां यही है। नहीं, वह भी नहीं।
जीसस को सूली पर लटकाने के पहले जिस गवर्नर, वाइसराय के द्वारा सूली
दी गई उसे--पायलट के द्वारा। उस पायलट ने आकर जीसस को सूली लगने के पहले, पास में आकर पूछा कि एक सवाल मुझे भी पूछना है, मरने के पहले जवाब दे जाओ। जीसस ने कहाः क्या सवाल है?
पायलट ने पूछाः वॉट इ.ज ट्रूथ? सत्य क्या है?
उस पायलट ने सोचा कि यह आदमी मर रहा है, आखिरी वक्त, और लोग कहते हैं,
कि इसे पता है, इससे पूछ लेना चाहिए। जीसस चुप रह गए!
उस आदमी ने कहाः जवाब दें, वॉट इ.ज ट्रूथ?
फिर भी जीसस चुप रह गए! शायद उन्होंने आंख से कहा होगा, होंठों के भीतर बिना शब्दों के कहा होगा, प्राणों में कहा होगा। लेकिन पायलट तो सिर्फ आदमी की भाषा समझता है। कंप्यूटर उसका जो पहचान लेता है, वही भाषा समझता था।
उसने कहाः नहीं बोलता यह आदमी, कुछ भी जानता नहीं मालूम पड़ता। सूली दे
दी गई!
जीसस ने उत्तर नहीं दिया! हां, कोई पंडित होता, अभी जीसस का कोई पादरी होता--वह भी उत्तर दे देता! वह भी कह देता कि बाइबिल में ऐसा लिखा है। सत्य यह है। जीसस ने उत्तर नहीं दिया और जीसस का पादरी उत्तर दे देता है! जरूर कहीं कोई फर्क है। जीसस जानते हैं और पादरी नहीं जानते।
सत्य क्या है--यह आदमी की सामर्थ्य है कि कह सके? परमात्मा क्या है--यह आदमी की सामर्थ्य है कि पहचान सके?
वहां तो हमारी सारी व्यवस्था गिर जाती है, केऑस हो जाती है, अराजकता
हो जाती है। सब पहचान गिर जाती है, सब शब्द खो जाते हैं। सब भाषा खो जाती है। वह आदमी ही खो जाता है, जो कल तक खोज रहा था। सन्नाटा और शून्य रह जाता है। वहां कौन पहचाने? किसको पहचाने? पहचान भी ले तो कहां स्मरण करे? कहां उत्तर दे? किसको बताए? वहां सब खो जाता है। नहीं, ज्ञानी वहां नहीं पहुंचते।
वहां अज्ञानी पहुंच जाते हैं। अज्ञानी से मेरा मतलब? अज्ञानी से मेरा मतलब है--जिसका ज्ञान, जो ज्ञान वह भी व्यर्थ हो गया; ऐसा जान लेता है। जो ज्ञान से भी ऊब जाता है। जो देखता है, ज्ञान में भी कुछ सार नहीं। जो ज्ञान को भी कहता है, ठीक है, स्मृति सम्हाल ले। ठीक है, कामचलाऊ है।
जिंदगी की जरूरतें पूरी करता है, लेकिन कहीं ले नहीं जाता। ज्ञान कोई मार्ग नहीं है। लेकिन ज्ञान से भटकना जरूरी है। जरूरी इसलिए है कि यह पता भी न चलेगा।

कृष्णमूर्ति कहते हैं कि वे सौभाग्यशाली हैं कि उन्होंने शास्त्र नहीं पढ़े। और मैं कहता हूं कि मैं सौभाग्यशाली हूं कि मैंने शास्त्र पढ़े। क्योंकि शास्त्र पढ़ कर मुझे पक्का पता लग गया कि वहां कुछ भी नहीं। बिना पढ़े पक्का पता नहीं लग सकता।
शास्त्र पढ़ लेना जरूरी है, ताकि पता चल जाए कि कुछ भी नहीं है। ज्ञान
को भी खोज लेना जरूरी है, ताकि पता चल जाए कि यहां कुछ भी नहीं है, ताकि वह दिशा समाप्त हो जाए। तो मेरे लिए ज्ञानमार्ग का एक ही उपयोग है। चलना आप जरूर--चल लेना ठीक से, ताकि मन में कहीं यह सवाल न रह जाए कि पता नहीं शास्त्र में कुछ होता है। ना, उसे देख ही लेना ठीक से। वहां कुछ भी नहीं है।
शास्त्रों का एक ही उपयोग है कि शास्त्र पढ़ने से शास्त्र व्यर्थ हो जाते हैं। लेकिन वह व्यर्थ हो जाना बड़ा भारी उपयोग है। क्योंकि तब वह झंझट समाप्त हो जाती है। तब आप ज्ञान के चक्कर में नहीं रहते। तब आप जानने की दिशा में बढ़ते हैं। तब आप ज्ञान की फिकर छोड़ देते हैं। तब आप एक बात जान लेते हैं कि दूसरे से नहीं हो सकेगा, दूसरा नहीं दे सकेगा, दूसरे से नहीं मिल सकता है।
यह इतनी बड़ी घटना है कि अगर मुझे यह पक्का ही पता चल जाए कि दूसरे से नहीं मिल सकता है तो मैं थ्रोन बैक, अपने पर ही फेंक दिया गया। अब तैरना है, डूबना है, मरना है-मुझे ही। अब कुछ रास्ता नहीं, कोई दूसरा नहीं दे सकता। कोई दूसरा नहीं दे सकता। और जिस दिन मुझे यह पक्का खयाल हो जाए कि कोई दूसरा देने वाला नहीं है, उस दिन मेरे भीतर इतनी ऊर्जा का जन्म होता है कि जिसका कोई हिसाब नहीं! वह तभी तक रुकी रहती है--जन्म से--जब तक मैंने दूसरों के कंधे का, हाथ का सहारा लिया।
अगर आपको समुद्र में फेंक दिया गया हो। कोई बचाने वाला न हो, कोई नाव न हो, कोई सहारा न हो-क्या करिएगा? हाथ-पैर नहीं तड़फड़ाइएगा? तैरने का मतलब क्या है और? तैरने का मतलब सिर्फ हाथ-पैर फेंकना है। और अब आदमी हाथ-पैर फेंकता है तो थोड़ी देर में व्यवस्था से फेंकने लगता है। पहले अव्यवस्था से फेंकता था, फिर व्यवस्था से फेंकने लगता है।
लेकिन तैरने की एक शर्त जरूरी है कि दूसरे का सहारा नहीं। अगर दूसरे
का सहारा हो तो कोई तैरना नहीं सीख सकता है। जो तैरना सिखाते हैं, वे कुछ भी नहीं सिखाते। वे सिर्फ एक काम करते हैं कि आपको उठा कर पानी में फेंक देते हैं। और सहारा नहीं देते और खड़े होकर किनारे पर देखते रहते हैं। कोई नहीं डूबना चाहता--हाथ-पैर फेंकने लगता है। और तैरना सबको मालूम है। एक दफे हाथ-पैर फेंकने की सिचुएशन पैदा होनी चाहिए। सिर्फ स्थिति आ जानी चाहिए कि हाथ-पैर फेंकना पड़े। सब आदमी तैरना जानते हैं।
तैरना कोई कला है? तैरना सबका स्वभाव है। पटक दो पानी में, सभी लोग हाथ-पैर फेंकेंगे। फर्क इतना ही पड़ता है कि जैसे-जैसे हाथ-पैर फेंकते हैं, हाथ-पैर ढंग से फिंकने लगते हैं। चार-छह दिन बाद व्यवस्था से फिंकने लगते हैं और कोई फर्क नहीं पड़ता।
धर्म सिर्फ उन्हें उपलब्ध होता है, जो जीवन के सागर में सब सहारे छोड़
कर डूबने की तैयारी कर लेता है, फिंक जाता है।
मैं गुरु उसको कहता हूं, जो आपको फेंक दे और घर की तरफ चला जाए! फिर लौट
कर भी न देखे कि आपका क्या हुआ। और अगर गुरु आपका हाथ पकड़ कर चलाए तो वह गुरु आपका दुश्मन है। वह आपको मार डालेगा, क्योंकि आप कभी तैरना न सीख पाएंगे, क्योंकि कभी आप अपने ऊपर न फेंके जाएंगे।
ज्ञान इतना ही कर दे अगर, कि आपको फेंक दे पानी में और आपको पता चल जाए
कि कोई शास्त्र न बचाएगा, कोई ज्ञान न बचाएगा। कुछ भी नहीं हो सकता इससे, तो आपकी जिंदगी में एक क्रांति शुरू हो जाएगी।
इसलिए मैं आपसे कहना चाहता हूं--ज्ञान मार्ग नहीं है। ज्ञान एक भटकन है। जब दिखाई पड़ जाता है तो आप उसके बाहर हो जाते हैं। और ऐसा नहीं है कि ज्ञान की भटकन जब दिखाई पड़ जाती है तो आपको फिर मीलों पीछे लौटना पड़ता है, क्योंकि आप मीलों चले गए! ऐसा नहीं है। जिस दिन आपको दिखाई पड़ता है कि ज्ञान का मामला बेकार है, आप तत्क्षण बाहर हो जाते हैं। ऐसा नहीं है कि मैं

हजार मील चला आया ज्ञान के रास्ते पर तब मैंने गीता सीख ली, कुरान सीख लिया, उपनिषद सीख लिया तो अब मुझे भूलना पड़ेगा। नहीं, भूलने का सवाल नहीं, भूलने की जरूरत भी नहीं। सिर्फ इतना ही जानना काफी है कि यह जो याद मैंने कर लिया है, यह ज्ञान नहीं, यह सिर्फ स्मृति है। बात खत्म हो गई। यह मेरा जानना नहीं है, यह किसी और का जानना है। यह उधार है, बासा है। मेरा नहीं है, मेरी अनुभूति नहीं है, मौलिक नहीं है, इतना जान लेना काफी है। कोई गीता को भूलने की जरूरत नहीं है।
एक, एक सज्जन मेरे पास आते थे। वे मेरी बातें सुनते थे। एक दिन वे आए
और उन्होंने कहा कि आपकी बातें मुझे इतनी जंच गईं कि मैं गीता और उपनिषद वगैरह जो मेरे पास थे, सबको बांध कर कुएं में फेंक आया।
मैंने कहाः कुएं ने क्या बिगाड़ा था तुम्हारा? अब कुआं दिक्कत में पड़ेगा, जितनी दिक्कत में तुम पड़े थे। अब वह गीता और उपनिषद पढ़ने लगा तो मरा! अब उस कुएं का क्या होगा? वह कहां फेंकेगा? उसके पास तो हाथ-पैर भी नहीं! तुमने कुएं को क्यों दिक्कत में डाला?
उन्होंने कहाः आप क्या कहते हैं! मैं तो सोचता था कि आप बड़े खुश होंगे।
यह खुश होने का सवाल नहीं है, अगर तुम गीता और उपनिषद को कुएं में फेंककर आते हो, इससे भी पता चलता है कि तुम अभी उससे मुक्त नहीं हुए। अभी राग मौजूद है। अभी तुमको पहले ऐसा लगता था कि गीता के ऊपर सिर रखो तो ज्ञान मिलेगा! अब तुमको ऐसा लगता है कि गीता को कुएं में फेंको तो ज्ञान मिलेगा! लेकिन मिलेगा गीता से ही! अभी कुएं में फेंको या सिर रखो!
शास्त्रों को जला नहीं डालना है। वे बड़े उपयोगी हैं। उनको फेंक नहीं आना कुओं में, क्योंकि कुओं का कोई कसूर ही नहीं है। आदमियों ने पैदा किए हैं आदमी को ही ढोना पड़ेगा। कुएं क्या करेंगे? कुओं को क्या मतलब है? नहीं, न फेंक आना है, न जला देना है। शास्त्र बड़े कीमती हैं। और उनकी सबसे बड़ी कीमत यह है कि उनको आप पढ़ेंगे तो आप उनसे मुक्त हो जाएंगे। जानेंगे कि नहीं कुछ मिला। तो शास्त्र पढ़ें, ज्ञान की खोज करें, लेकिन पूरे वक्त जांच करते रहें, कुछ मिला? कुछ पाया? शब्द ही शब्द, शब्द ही शब्द--सत्य कुछ भी नहीं! और जब शब्दों का जाल घेर ले और दिखाई पड़ जाए कि सत्य तो कुछ भी नहीं मिला--शब्द ही शब्द मिल गए! शब्द ही शब्द मिल गए!
एक छोटी सी कहानी और अपनी बात मैं पूरी करूंगा।
एक आदमी था, बहुत अदभुत आदमी था--लारेंस। वह अरेबिया में, बहुत दिन तक अरब में आकर रहा। अरब की क्रांति में उसने भाग लिया। और धीरे-धीरे अरब लोगों के साथ उसका इतना प्रेम हुआ कि वह करीब-करीब अरबी हो गया। फिर अपने कुछ अरब मित्रों को लेकर वह पेरिस गया दिखाने। पेरिस में एक बड़ा मेला भरा हुआ था तो उसने कहा कि चलो तुम्हें पेरिस दिखा लाऊं। एक बड़े होटल में ठहराया। जाकर पेरिस घुमाया-एफिल टावर दिखाया, म्युजियम दिखाया, सब बड़ी- बड़ी चीजें दिखाईं! लेकिन अरबों को किसी चीज में रस न था! उनको रस एक अजीब चीज में था, जिसकी आप सोच ही नहीं सकते! वे लूब्र म्यूजियम में जल्दी करें, कि जल्दी होटल वापस चलो!
मेले में दिखाने ले गया। एक्झिबीशन दिखाई--बड़ी-बड़ी चीजें थीं। एफिल टावर को दिखाया। वे कहते कि जल्दी वापस चलो और जल्दी से जाकर बाथरूम में घुस जाते! इसने कहा, मामला क्या है!
सिनेमा में ले जाएं तो वे बीच में कहें कि जल्दी वापस चलो और जाकर सबके सब, जो आठ-दस साथी थे, सब अपने-अपने बाथरूम के अंदर हो जाते! उसने कहा कि मामला क्या है!
पता चला कि मामला यह था--उनके लिए सबसे चमत्कार की चीज थी--टोंटी नल की! रेगिस्तान में रहने वाले लोग थे, उनके लिए इतना बड़ा मिरेकल था यह कि टोंटी खोलो और पानी बाहर! वे तो बस बाथरूम भी इतना बड़ा चमत्कार था--क्योंकि पानी की बड़ी तकलीफ थी और उनकी समझ में नहीं आता था कि यह हुआ क्या, होता कैसे! कि यह होता कैसे है? वे तो बार-बार दिन में बीस दफा अंदर बाथरूम में जाकर टोंटी खोल कर देखते फिर पानी गिर रहा है!

जिस दिन जाने का वक्त आया, सब वापस लौटने को थे। कार बाहर आ गई। सामान
रख गया, सब अरब एकदम नदारद हो गए! तो उसने खोजवाया कि वे कहां गए? मैनेजर से पूछा कि सब साथी कहां गए? अभी तो यहां थे, पता नहीं कहीं बाहर तो नहीं निकल गए? होटल के आस-पास दिखवाया, कहीं भटक न जाएं, भाषा नहीं जानते! लेकिन वे कहीं न निकले! फिर उसे खयाल आया कि कहीं वे बाथरूम में न चले गए हों, जाने का वक्त है!
वह गया। अंदर जाकर देखा तो वे सब अपने-अपने बाथरूम में नल की टोंटी निकालने की कोशिश करते थे! तो उसने पूछाः यह तुम क्या कर रहे हो पागलो?
तो उन्होंने कहाः इस टोंटी को हम घर ले जाना चाहते हैं। ये बड़ी अदभुत हैं। बस खोलो और पानी निकलता है!
उसने कहा कि पागलो, टोंटी ले जाने से कुछ भी न होगा, क्योंकि टोंटी के पीछे बड़ा जाल है, बड़ा रिजर्वायर है पानी का। उधर से यहां तक आई हुई नालियां पड़ी हैं, उनसे पानी आ रहा है। टोंटी से कोई मतलब नहीं है।
और वे बिचारे यही समझते थे कि इतनी सी टोंटी, इसको खोल कर ले चलें घर, अरब में मजा आ जाएगा! जो भी देखेगा, वही चमत्कृत होगा। खोली टोंटी और पानी निकल आएगा!
वह जो शास्त्र है सिर्फ टोंटी है। उसके पीछे बड़ा जाल है। शास्त्र की टोंटी खोलने से कोई ज्ञान नहीं निकल आएगा। उसके पीछे बड़ा जाल है। कृष्ण की गीता सिर्फ टोंटी है, पीछे कृष्ण का बड़ा जाल है, बड़ा रिजर्वायर है। वह आप गीता को दबाए फिर रहे हैं! आप वही गलती कर रहे हैं, वे जो अरब नासमझी से करते थे। शास्त्रों को दबाए फिरने से कुछ भी न होगा। वे सिर्फ टोंटियां हैं, उनसे कुछ भी नहीं निकल सकता। उनके पीछे बड़ा जाल है। उस पीछे बड़े जाल पर पहुंचना होगा, तो आप भी शास्त्र बन जाएंगे। तब आप जो बोलेंगे, वह शास्त्र बन जाएगा। लेकिन उस पीछे के रिजर्वायर पर वह पभछे जलस्रोत, परमात्मा का, सत्य का जहां है, वहां पहुंचना पड़ेगा। टोंटी ले जाने से कुछ भी नहीं हो सकता।
टोंटियां बिक रही हैं, मुफ्त भी बिक रही हैं! वह गीता प्रेस गोरखपुर टोंटियां छापता है! उसे अपने घर में रख लो! दो-दो पैसे, चार-चार पैसे में रख लो! खोलो टोंटी ज्ञान की धारा बहने लगेगी! नहीं, टोंटियों से कुछ भी नहीं हो सकता। ज्ञान नहीं, जानने की क्षमता।
और प्रश्न रह गए हैं, वह कल सुबह बात करूंगा।

मेरी बातों को इतनी शांति से सुना, उससे अनुगृहीत हूं। अंत में सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

शून्य के पार
तीसरा प्रवचन

भक्तिः भगवान का स्वप्न-सृजन
(8 मार्च 1970 सुबह)

मेरे प्रिय आत्मन्!
मनुष्य के मन की बड़ी शक्ति है--भाव। लेकिन शक्ति बाहर जाने के लिए उपयोगी है, भीतर जाने के लिए बाधा। भाव के बड़े उपयोग हैं, लेकिन बड़े दुरुपयोग भी।
गहरे अर्थों में भाव का मतलब होता है--स्वप्न देखने की क्षमता। वह भावना है, जो हमारे भीतर स्वप्न निर्माण की प्रक्रिया है।
स्वप्न देखने के उपयोग हैं। स्वप्न देखने का सबसे बड़ा उपयोग तो यह है
कि स्वप्न हमारी नींद को सुविधापूर्ण बनाता है, बाधा नहीं डालता। इसे थोड़ा समझना उपयोगी है।
साधारणतः हम सोचते हैं कि रात स्वप्न आता है तो उससे नींद में बाधा पड़ती है। वह बात गलत है। स्वप्न से नींद में बाधा नहीं पड़ती। स्वप्न नींद को चलाने का ढंग है। अगर स्वप्न न हो तो नींद में बहुत जल्दी बाधा पड़ सकती है।
जैसे आप भूखे सो गए है तो भूख बार-बार नींद तोड़ने की कोशिश करती है कि उठो, भूख लगी है। स्वप्न इंतजाम करता है--स्वप्न कहता है, भोजन कर लो, उठने की क्या जरूरत है? स्वप्न भोजन का इंतजाम करा देता है! स्वप्न झूठे भोजन का इंतजाम करा सकता है। आप स्वप्न में भोजन करने लगते हैं और नींद अपने रास्ते पर चलती रहती है। आपको प्यास लगी है और अगर स्वप्न न हो तो नींद टूट जाए। तो स्वप्न इंतजाम करता है कि यह सरिता बह रही है, भर कर, मन भर कर पानी पी लो।
आपने अलार्म घड़ी लगा रखी है और चार बजे सुबह उठना है। अब अलार्म घड़ी नींद को तोड़ देगी। स्वप्न अलार्म की घड़ी नहीं सुनता-सुनता है कि मंदिर की घंटियां बज रही हैं, पूजा हो रही है! स्वप्न नींद को बचाने की तरकीब है, सेफ्टी मेजर है। नींद टूट न जाए, इसका इंतजाम है। साधारणतः नींद को बचाता है स्वप्न।
एक और बड़ी नींद है, जिसको आध्यात्मिक नींद कहें, जिसमें हम चौबीस घंटे सोए हुए हैं! उसको बचाने के लिए भी बहुत स्वप्नों की जरूरत है। भविष्य के स्वप्न हम इसीलिए देखते हैं। आज दुख है तो मैं कल के सपने देखता रहता हूं कि कल सब ठीक हो जाएगा। आज नौकर हूं तो कल के सपने देखता रहता हूं कि कल मालिक हो जाऊंगा। थोड़ी देर की बात है, थोड़ी प्रतीक्षा की बात है।
मैंने सुना है, एक फकीर मर गया था। और जब वह भगवान के सामने पहुंचा तो उसने भगवान से पूछा कि मैं बहुत हैरान हूं कि लोग जिंदा क्यों हैं? उनके जिंदा रहने का कारण क्या है? क्योंकि लोग इतने दुखी हैं, मर क्यों नहीं जाते?
तब भगवान ने कहा, आशा के कारण! आज दुख है कल सब ठीक हो जाएगा!
तो जिंदगी में एक गहरी नींद भी है। जो हम रोज सोते हैं, वह तो बहुत साधारण नींद है। शरीर की जरूरत है। एक और गहरी नींद है, जिसमें हम जन्म से ही सोए रहते हैं! और बहुत कम सौभाग्यशाली हैं, जो मृत्यु के पहले उस नींद से जागते हैं। उस नींद को चलाने में भी सपने बड़े महत्वपूर्ण हैं। वे आशा बंधाए रखते हैं।
एक बार ऐसा हुआ कि इजिप्त की एक मोनेस्ट्री में, एक आश्रम में--फकीरों
के एक आश्रम में एक आदमी मर गया, एक फकीर मर गया। उस आश्रम में नियम था कि आश्रम के नीचे ही कई मील की खंदक खोद रखी थी, जिसमें मुर्दों को नीचे डाल देते थे। फकीर मर गया था, चट्टान खोली गई और फकीर को मरघट में नीचे डाल दिया। चट्टान बंद कर दी गई।
लेकिन भूल हो गई। वह फकीर मरा न था, सिर्फ बेहोश था! चट्टान बंद हो गई।
और फकीर होश में आ गया!

ऐसी भूल बहुत बार हो जाती है। जिंदा आदमियों को बहुत बार हम मरा हुए समझ लेते हैं और बहुत बार मरे हुए आदमियों को हम जिंदा समझ लेते हैं!
हम सब मरे हुए आदमी हैं और अपने को जिंदा समझते हैं!
अभी सुबह ही मैं कह रहा था कि हम मरते कभी हैं और दफनाए कभी जाते हैं!
मर तो जाता है आदमी बहुत जल्दी--कोई बीस साल में, कोई पंद्रह साल में, कोई दस साल में, कोई पांच साल में! और दफनाया जाता है सत्तर साल में, पचहत्तर साल में, अस्सी साल में! बाकी का जो अंतराल है बीच का--मरने और दफनाया जाने का, उसमें हम मरे हुए जीते हैं! तो कुछ आश्चर्यजनक नहीं कि मरे हुए लोगों को हम जिंदा समझते हैं जिंदा आदमी को मरा हुआ समझ लिया हो!
वह आदमी होश में आ गया, उसकी मुसीबत हम समझें। वहां सिवाय लाशों के और कोई भी न था। अंधेरा था, कीड़े-मकोड़े थे। जो लाशों पर पलते थे, ऐसे छोटे कीड़े-मकोड़े पैदा हो गए थे। बदबू थी, दुर्गंध थी। उस आदमी ने आत्महत्या कर ली होगी? नहीं की! आशा ने उसे जिलाए रखा! उसने सोचा, हो सकता है कल कोई मर जाए और चट्टान खुले! चट्टान तो तभी खुलती थी, जब कोई मरता। वह बहुत चिल्लाया! मालूम था उसे कि चट्टान के बाहर आवाज नहीं जाएगी, लेकिन फिर भी चिल्लाया!
आशा सब कुछ करवा देती है--शायद कोई सुन ले!
जानता था कि कोई नहीं सुनेगा। आश्रम दूर था चट्टान से। और चट्टान सख्ती से बंद हो जाती थी। कई बार उसने चट्टान बंद की थी। जब कोई आदमी मर जाता था तो नीचे दफना कर बंद कर देते थे। जानता था कि नहीं कोई सुनेगा, लेकिन आशा ने कहा, चिल्ला लो, शायद कोई सुन ले! कोई निकलता हो, कोई गुजरता हो, कोई पास आया हो! नहीं किसी ने सुना, लेकिन तब भी आशा ने उसे जिंदा रखा-- कि हो सकता है कल कोई मर जाए, सांझ कोई मर जाए, परसों कोई मर जाए!
वह आदमी सात साल तक वहां जिंदा रहा! कैसे जिंदा रहा होगा?
पहले एक दो दिन तो उसने भूख में गुजार दिए। लेकिन भूखा आदमी कब तक रह सकता था--फकीर था--कभी मांस नहीं खाया और कभी सोचा भी नहीं था कि मांस खा लूंगा। और वह भी मरे हुए मुर्दों का मांस खा लूंगा, यह तो कभी सोचा न था! असल में सुविधाओं में कभी भी पता नहीं चलता कि हम क्या कर सकते हैं? वह तो असुविधाओं में पता चलता है।
कब उसने मांस खाना शुरू कर दिया--सड़ी हुई लाशों का, उसे पता भी न चला! उसने कीड़े-मकोड़े पकड़ कर खाने शुरू कर दिए, क्योंकि जिंदा रहना जरूरी था! मरघट की दीवारों से नालियों का पानी रिस-रिस कर भीतर आता था, वही वह चाट-चाट कर पीने लगा, क्योंकि जिंदा रहना जरूरी था! दो-चार दिन की ही तो बात है। कभी न कभी तो कोई मरेगा, मरघट खुलेगा और मैं बाहर निकल जाऊंगा!
और वह फकीर, जिसने सबके लिए प्रार्थना की थी कि भगवान, सबको लंबी उम्र दे। वह फकीर अब भी प्रार्थना करता था, लेकिन वह यही कहता है कि आश्रम में कोई एक आदमी मर जाए, नहीं तो यह कब्र कैसे खुलेगी! हे भगवान, किसी तरह एक आदमी को मार!
सात साल बहुत लंबा वक्त था, उस अंधेरे में, उस मरघट सात साल बाद कोई मरा, वह चट्टान खुली। वह आदमी बाहर आ गया!
लोग तो भूल ही चुके थे। लोग तो पहचान नहीं सके पहले तो लोग भाग खड़े हुए। समझे कि कोई भूत-प्रेत है! कौन निकला मरघट से? उस आदमी के बाल बड़े हो गए थे। उसकी आंख की पलकें इतनी बड़ी हो गई थीं कि आंख नहीं खुलती थीं! और आश्चर्य कि अपने साथ वह आदमी कुछ सामान लेकर बाहर निकला!
इजिप्त में रिवाज है कि मुर्दों को नये कपड़े पहना देते हैं। और एक-दो जोड़ी कपड़े भी रख देते हैं उनके साथ। कुछ पैसे भी रख देते हैं! उसने सब मुर्दों के कपड़े और सब मुर्दों के पैसे इकट्ठे कर लिए! इस आशा में कि कभी बाहर निकलूंगा तो काम पड़ जाएंगे! और जब उसने कहा, भागो मत, मैं वह आदमी हूं, जिसे तुम सात साल पहले दफना गए थे। और डरो मत, मैं मर नहीं गया था, मैं जिंदा था।
उन्होंने कहा कि तुम मर नहीं गए थे, जिंदा थे, यह उतना आश्चर्य नहीं। सात साल तुम इस मरघट में जिंदा कैसे रहे?

उस आदमी ने कहाः आशा के सहारे! सोचा कल, सोचा कल और दिन गुजरते गए। और
जो गुजर गया, वह मैं भूल गया। और कल की आशा फिर बंधी रही कि कल और देखो, मेरी आशा सफल हो गई। आखिर मरघट खुल गया और मैं बाहर आ गया।
जिंदगी भर हम सपने देखते रहते हैं, कल के। और कल का सपना, हमें आज जिंदा रहने में सहयोगी हो जाता है। और कल का सपना, आज की नींद नहीं टूटने देता। आज के दुख को हम झेल लेते हैं और सोए रहते हैं!
भाव की शक्ति का, कल्पना की शक्ति का, स्वप्न की शक्ति का उपयोग है, लेकिन आध्यात्मिक उपयोग नहीं। अत्यंत गैर-आध्यात्मिक उपयोग। इसी शक्ति का कुछ लोग उपयोग करते हैं, भगवान को खोजने के लिए! इसी शक्ति का, यह जो कल्पना की प्रगाढ़ शक्ति है, इसी शक्ति का उपयोग करते हैं! वे उसे भक्ति कहते हैं! वे कहते हैं, हम अपनी कल्पना के ही भगवान में जीएंगे! हम भगवान की इतनी कल्पना करेंगे, इतना भाव करेंगे वह कैसे न आएगा?
वह आ जाता है। लेकिन वह असली भगवान नहीं होता, वह हमारी कल्पना का ही भगवान होता है। कल्पना प्रगाढ़ हो तो हम अपने भगवान निर्मित कर सकते हैं। जैसे भगवान चाहें, वैसे निर्मित कर सकते हैं। और कल्पना की इतनी शक्ति है कि जितना वस्तुतः आदमी सामने खड़ा हो, वह आदमी भी फीका मालूम पड़े और कल्पना का आदमी ज्यादा सच्चा मालूम पड़े! रोज भी जिंदगी में हम ऐसा करते हैं।
एक व्यक्ति किसी स्त्री के प्रति मोहित हो जाए तो सारा गांव कहता है पागल हो गया है! वह स्त्री साधारण है। लेकिन उस आदमी को दिखाई नहीं पड़ता! उसे कुछ और ही दिखाई पड़ता है। उसने अपनी कल्पना की स्त्री को उस स्त्री के ऊपर उढ़ा दिया है! वह जो स्त्री गांव वाले लोग पहचानते हैं, वह सिर्फ खूंटी का काम कर रही है। वह असली स्त्री नहीं है। असली स्त्री तो उसके दिमाग की है, जिसने उस खूंटी के ऊपर उढ़ा दिया है।
मजनू को बुलाया उसके गांव के राजा ने। और उसने कहा कि तू पागल हो गया है! क्योंकि जान कर आपको हैरानी होगी लैला एक बदशक्ल औरत थी! उस राजा ने कहा, तू पागल हो गया है, एक बदशक्ल औरत के लिए? उससे बहुत सुंदर लड़कियां हम तुझे दे सकते हैं, छोड़ उसकी बात। उसने गांव की दस-बारह सुंदर लड़कियां बुलाई थीं और मजनू से कहाः देख, इन लड़कियों को देख?
उस मजनू ने देखा और उसने कहाः "मुझे लैला के सिवाय कोई दिखाई ही नहीं पड़ता।
उस राजा ने कहाः "तू पागल तो नहीं हो गया है!
मजनू ने कहाः "हो सकता है, लेकिन अभी तो मुझे आप पागल मालूम पड़ते हैं,
जो लैला को कह रहे हैं कि वह बदशक्ल है! लैला को देखा है आपने?
उस राजा ने कहाः पागल! भलीभांति देखा है। मेरे दरवाजे से रोज निकलती है। सारे गांव ने देखा है। सारा गांव हंस रहा है। सारा गांव कह रहा है कि मजनू पागल हो गया है एक साधारण सी औरत के लिए! उसे बहुत अच्छी स्त्री मिल सकती है। छोड़ तू उसकी फिकर।
मजनू ने कहाः फिर मेरी आंख से आपने लैला को नहीं देखा! आप, आप लैला को नहीं जानते। लैला को जानना हो तो मजनू की आंख चाहिए उसे। मेरी आंख ही सिर्फ उसको देख सकती है!
असल बात यह है कि लैला जो है, वह मजनू का क्रिएशन है, वह मजनू का सृजन है। उसने अपनी कल्पना की स्त्री को लैला के ऊपर थोप दिया। इसलिए प्रेयसी जितनी सुंदर दिखाई पड़ती है, उतनी पत्नी नहीं दिखाई पड़ती। प्रेयसी ही पत्नी हो जाए तो भी दिखाई नहीं पड़ती, क्योंकि पत्नी होते से वह जो कल्पना की, स्त्री की, वह धीरे-धीरे उतरती चली जाती है खूंटी से। फिर खूंटी ही रह जाती है। और तब पता चलता है, यह कोई धोखा हो गया, यह तो बड़ी गलती हो गई!
वे प्रेमी सुखी रहते हैं, जिनको उनकी प्रेयसी कभी नहीं मिलती, क्योंकि उनकी कल्पना सदा जागी रहती हैं। लेकिन जिनको प्रेयसी मिल जाती है, उनकी कल्पना टूट जाती है।
मैंने सुना है, एक पागलखाने में एक, एक मनोवैज्ञानिक गया था, पागलों
का अध्ययन करने। और पागलखाने का जो प्रधान था, उसने एक पागल को दिखाते वक्त कहा, देखते हैं इस आदमी को, सींकचे में बंद? यह एक यूनिवर्सिटी का प्रोफेसर था।

यूनिवर्सिटी के प्रोफेसर को सदा सावधान रहना चाहिए, वह कभी भी पागल
हो सकता है। यूनिवर्सिटी पागलखाने की तैयारी है। वहां से खतरा सदा है। आन दी वर्ज, वहां बिल्कुल किनारे पर खड़े हुए हैं लोग, जरा धक्का लगे तो चले जाएं।
यह एक विश्वविद्यालय का अध्यापक है, यह पागल हो गया है। उस अध्ययन करने वाले आदमी ने पूछा, इसके पागल होने का कारण?
उसने कहाः देखें वह हाथ में जो तस्वीर लिए हुए है, वह औरत उसके पागल होने का कारण है। यह इस औरत को प्रेम करता था, और नहीं पा सका और पागल हो गया!
फिर वे आगे बढ़े। दूसरे सींकचों में बंद एक आदमी को, फिर उस प्रधान ने कहा जेल के, देखते हैं इस आदमी को? यह भी पागल हो गया, उसका ही मित्र है! इसके पागल होने का क्या कारण?
उसने कहाः कि वह जो फोटो दिखाई थी तुम्हें उस पागल के पास, यह भी उस औरत को प्रेम करता था। वह औरत इसको मिल गई! इसका विवाह हो गया, उसकी वजह से यह पागल हो गया!
एक आदमी न मिलने से पागल हो गया है, एक आदमी मिलने से पागल हो गया है!
फिर भी उसने कहा कि वह जो न मिलने से पागल हुआ है, वह बड़ा सुखी है, क्यों कि अभी भी वह सोचता है, कभी न कभी मिलना हो जाएगा! और यह जो मिलने से पागल हो गया, वह बड़ा दुखी है, क्योंकि अब इसको कोई आशा नहीं है।
पुरुष स्त्रियों पर कल्पनाएं थोप रहे हैं, स्त्रियां पुरुषों पर कल्पनाएं थोप रही हैं! बाप अपने बेटों पर कल्पनाएं थोप रहे हैं, बेटे अपने बापों पर कल्पनाएं थोप रहे हैं! इसलिए सब फिर पीछे परेशान हो जाते हैं। क्योंकि वह जो असली आदमी है जब प्रकट होता है तो लगता है, यह कैसा बेटा है! इसको मैंने पाल-पोस कर बड़ा किया? जिसको पाल-पोस कर बड़ा किया था, वह आपकी इमेजिनेशन थी, वह आपकी कल्पना थी। वह असली आदमी नहीं था। जो अब सामने प्रगट हुआ है, यही असली आदमी है।
मां कहती हैं, कि मैंने तुझे नौ महीने पेट में रखा! जिसे उसने पेट में रखा था, वह कभी पैदा नहीं होता, वह उसकी कल्पना थी। जो पैदा होता है, वह कोई और है। और जब वह पैदा होता है, तब भी मां कल्पना थोपे जाती है! अब छोटा बच्चा है वह। रोक भी नहीं सकता कि कल्पना मत थोपो। मां थोपे चली जाती है- नेपोलियन बनोगे, विवेकानंद बनोगे, कृष्ण बनोगे! न मालूम क्या-क्या बना लेती है अपनी कल्पना में! जब वह लड़का बड़ा होकर खुद बनता है, तब सब कल्पनाएं टूट जाती हैं। खूंटी सामने आ जाती है। मां बहुत दुखी हो जाती है। इस बेटे के लिए तो जन्म न दिया होता तो अच्छा होता! यह बेटा कहां से आ गया?
हम चौबीस घंटे कल्पनाओं में जी रहे हैं! इन्हीं कल्पनाओं के आधार पर कुछ लोग भगवान को भी पाना चाहते हैं! कुछ ने पा भी लिया है! लेकिन वह भगवान हमारी कल्पनाओं के भगवान हैं। फिर व्यवस्थित रूप से अगर कोई कल्पना करे तो कोई भी कल्पना साकार हो सकती है।
मैंने सुना है, टाल्सटाय के संबंध में, कि वह एक सीढ़ियों पर चढ़ रहा था,
एक लाइब्रेरी में। संकरी सीढ़ियां थीं और उसके साथ एक औरत चल रही थी! असली औरत नहीं! कवियों के साथ असली औरत अक्सर नहीं होतीं! उनके साथ तो उनकी कल्पना की औरत होती है!
टाल्सटाय के साथ एक स्त्री चल रही थी, जो उसके किसी उपन्यास की पात्र थी। वह उपन्यास लिख रहा था, उसमें वह एक पात्र थी। वह उसके साथ चल रही थी। वह उससे बातचीत करता हुआ सीढ़ियां जा रहा था! वह सिर्फ टाल्सटाय को ही पता था उस स्त्री का और किसी को पता नहीं था! रास्ता संकरा था। ऊपर से एक आदमी उतर रहा था। वहां से दो की ही जगह थी। और वह तीसरी औरत, बीच में जो थी, कहीं उसको धक्का न लग जाए! उन्नीस सौ सत्रह के पहले की बात है। अब रूस में कोई स्त्री के धक्के से न डरता है, न चिंता करता है। कहीं उसको धक्का न लग जाए, तो टाल्सटाय सरका और सीढ़ियों से नीचे गिर पड़ा!
उस दूसरे आदमी ने नीचे आकर टाल्सटाय को कहा कि आप क्यों सरके? हम दो के लिए काफी जगह थी। टाल्सटाय ने कहाः दो होते तो मैं भी क्यों सरकता? यह तो

घुटना टूटने पर पता चला कि दो ही थे। जब मैं तीन का सोच रहा था! एक औरत से बातें कर रहा था। उसने कहा, कौन औरत? कोई औरत दिखाई नहीं पड़ती!
उसने कहाः अब तो मुझे भी दिखाई नहीं पड़ रही। लेकिन इसके लिए पैर टूट जाना जरूरी था। पैर टूटा, तब पता चला कि गलती हो गई।
अब टाल्सटाय अगर भगवान का दर्शन करना चाहें तो उनको कोई कठिनाई नहीं।
तब इनकी औरत की जगह भगवान चलने लगेंगे, बांसुरी बजाने वाले भगवान से बातें होने लगेंगी! धनुर्धारी भगवान से बातें होने लगेंगी!
यह, यह टाल्सटाय के लिए बिल्कुल सरल है। क्योंकि वह जो फैकल्टी, वह जो दिमाग की व्यवस्था है, वह जो स्वप्न देखने की व्यवस्था है, यह उसका ही खेल है। हम इतना तीव्र स्वप्न देख सकते हैं कि जो मौजूद नहीं है, वह हमारे पास मौजूद मालूम होने लगे! हम उससे बात करने लगें! उसके साथ जीने लगें!
यह जो, यह जो भाव की सामर्थ्य है--इस भाव की सामर्थ्य का नाम भक्ति है।
यह भाव की सामर्थ्य, जब भगवान की तरफ लगा दी जाती है तो उसका नाम भक्ति है! यह भाव की सामर्थ्य, यह स्वप्न देखने की क्षमता, जब हम भगवान के प्रति लगा देते हैं तो भक्ति बन जाती है! भक्त चौबीस घंटे भगवान के साथ रहने लगता है! लेकिन ध्यान रहे, भाव सपना पैदा करता है और सपने सदा प्राइवेट होते हैं। सपने कभी पब्लिक नहीं होते। सपने का एक गुण है कि मैं और आप कितनी ही कोशिशें करें, एक ही सपना दोनों नहीं देख सकते। सपने की एक पहचान है। जिस चीज को पब्लिक न किया जा सके, जिस चीज को दो आदमी साथ न देख सकें, वह सपना है। जिस चीज को दस आदमी साथ देख लें, वह सत्य है।
सपना जो है, मैं अपना ही देखूंगा, आप अपना ही देखेंगे। सपने के संबंध में समाजवाद कभी भी नहीं लाया जा सकता। कभी ऐसा नहीं हो सकता कि सब एक से सपने देखें। सब एक सपना देखें, यह कभी भी नहीं हो सकता, क्योंकि सपना मेरी निजी बात है, आपकी अपनी निजी बात है। और अगर मैं आपके सपने में मौजूद भी हो जाऊं तो वह सपने का ही मैं रहूंगा, मैं नहीं मौजूद हो सकता।
भगवान भी भक्तों के बिल्कुल निजी अनुभव हैं--एकदम प्राइवेट! वे भी पब्लिक नहीं हैं!
अगर हम एक ही मकान में मीरा को, फ्रांसिस को और तुलसीदास को बंद कर दें
तो उस कमरे में बड़ा उपद्रव हो जाएगा रात को। क्योंकि मीरा अपने कृष्ण को देखती रहेगी, तुलसी अपने राम को देखते रहेंगे, फ्रांसिस जीसस को देखता रहेगा। और सुबह तीनों में विवाद हो जाएगा। कि गलत कह रहे हो आप, कहां थे कृष्ण यहां? फ्रांसिस कहेगा, कोई कृष्ण की खबर नहीं मिली, रात भर जीसस खड़े रहे! और मीरा कहेगी, किस जीसस की बातें कर रहे हैं! आपको सुनाई नहीं पड़ी बांसुरी की आवाज! रात भर नृत्य होता रहा! और तुलसीदास हंसेंगे कि तुम दोनों पागल तो नहीं हो गए हो? न यहां नृत्य हुआ है, न कोई सूली पर लटका है, यहां तो राम धनुष बाण लिए पहरा देते रहे!
हम अपने भगवान पैदा कर लेते हैं! हम अपने भगवान पैदा कर सकते हैं। पूरा जीवन गंवा सकते हैं! बहुत जीवन गंवा सकते हैं, स्वप्न के भगवान के साथ! वैसे स्वप्न के भगवान में एक सुविधा है कि आप जैसे हैं, वैसे ही बने रहते हैं! भगवान आपमें कुछ रद्दोबदल नहीं कर सकता है, क्योंकि आपके ही मन से पैदा हुआ भगवान है, आपमें कोई फर्क नहीं ला सकता। असली भगवान की तरफ जाना हो तो आपको मिटना पड़ेगा और नकली भगवान की तरफ जाना हो तो भगवान को बनाना पड़ेगा।
इस फर्क को समझ लेंगे असली भगवान की तरफ जाना हो तो मुझे मिटना पड़ेगा। जैसा भी मैं हूं, मुझे मिट जाना पड़ेगा। तभी मैं असली भगवान को जान सकूंगा। और अगर नकली भगवान को जानना हो तो मैं जैसा हूं, वैसा ही रहूंगा और भगवान को बनाना पड़ेगा। मैं उसको बना लूंगा। जैसा मुझे बनाना है, वैसा मैं उन्हें बना लूंगा और मैं उन्हें देख लूंगा!
भक्ति भगवान का सृजन है--स्वप्न-सृजन! क्योंकि भगवान का सृजन हम कैसे
कर सकते हैं? भगवान तो वह है, जिसने हमारा सृजन किया है। और भक्त का भगवान वह है, जिसका भक्त ही सृजन करता है।
भगवान तो वह है, कि जब हम नहीं थे, तब भी था; हम जब नहीं होंगे, तब भी होगा।

भक्त का भगवान वह है, जो भक्त ने पैदा किया है। और वह भक्त के साथ ही है, और भक्त के विदा होते ही विदा हो जाएगा। भक्त का भगवान, भगवान नहीं है, लेकिन सुखदायी हो सकता है, आनंददायी हो सकता है।
सुखद सपने होते हैं। और भगवान तो व्यवस्थित सपना हैं भक्त का! वह अपने सुख की कल्पना कर लेता है। वह जब चाहता है भगवान को, तब उन्हें मुस्कुराना पड़ता है! और जब चाहता है, तब नाचना पड़ता है! जब चाहता है, तब उनको उसके ऊपर रोशनी डालनी पड़ती है! भगवान से वह जो चाहता है, करवा लेता है!
और बड़ा प्यारा सपना है, क्योंकि वहां खूंटी है ही नहीं, सिर्फ सपना टंगा हुआ है। इसलिए कभी कठिनाई नहीं आती। सिर्फ सपना ही है और सपना अपने हाथ में है। भगवान को नचाना भी अपने हाथ में है! तो भक्त अपने भगवान को नचाए फिरता है! भक्त भागते हैं आगे-आगे, पीछे उनके भगवान उनको मनाने के लिए भी भागते रहते हैं! वह अपने ही भगवान हैं, अपनी ही कल्पना से पैदा हुए। भक्ति से कोई कभी भगवान तक नहीं पहुंचा। भक्ति के कारण जितने लोग भगवान तक पहुंचने से रुके हैं, उतने शायद ही किसी और बात से रुके हों। लेकिन सुखद है। और आदमी भगवान को कम चाहता है, सुख को ज्यादा चाहता है। भगवान को चाहना किसको है?
एक मित्र ने पूछा हैः प्रश्न लिखा उन्होंने। उन्होंने लिखा है, कि हमें क्या मतलब भगवान से, अगर हमें कल्पना का भगवान भी सुख दे सकता हो! तो हम सुख चाहते हैं। हमें क्या मतलब भगवान से? हम सुख चाहते हैं!
यह सवाल महत्वपूर्ण है। यह महत्वपूर्ण इसलिए है कि यह किसी एक व्यक्ति का सवाल नहीं है। हजारों लोगों का यही सवाल है। सुख मिलना चाहिए। लेकिन ध्यान रहे, जो सुख हमने निर्मित किया है, वह सुख झूठा है। वह आनंद नहीं है। आनंद वह है, जो हमने निर्मित नहीं किया है। इसलिए जो सुख हमने निर्मित किया है, वह खोता रहेगा। बार-बार खोता रहेगा।
रामकृष्ण को समाधि लग जाती थी। जब समाधि टूटती थी तो छाती पीट-पीट कर रोते थे कि अब मुझे फिर समाधि दे, हे मां! मुझे समाधि दे! अब फिर दर्शन दे! तू कहां खो गई?
असल में सपने को कितनी देर तक पकड़ कर रखिएगा! सपना बीच-बीच में खोएगा
और सपना जब खोएगा, तब दुख देगा। तो यह सपने का जो सुख है, शराब जैसा सुख है। एक आदमी शराब पी लेता है--फिर होश आता है, फिर वह कहता है और शराब दो, क्योंकि मैं दुख में पड़ गया! फिर और शराब पीता है! फिर जब तक होश नहीं रहता, तब तक ठीक। फिर होश आता है, फिर वह कहता है, मुझे और शराब दो! बेहोशी में उसको सुख मालूम पड़ता है, होश में फिर दुख मालूम पड़ने लगता है!
जो सपने में सुख पा रहा होगा, वह बार-बार दुख भी पाता रहेगा, क्योंकि सपना टूटता रहेगा। सपना बार-बार टूटेगा। सपना स्थायी नहीं हो सकता। सपना शाश्वत नहीं हो सकता। सपना तो टूटेगा। और जब टूटेगा तो बहुत दुख दे जाएगा। फिर सपने को बनाना पड़ेगा।
सपने से सुख मिल सकते हैं, लेकिन वे सुख वास्तविक नहीं हैं, क्योंकि उसके पीछे निरंतर दुख प्रतीक्षा कर रहा है। नहीं, आनंद कुछ बात और है।
आनंद हमारे द्वारा पैदा किया गया सुख नहीं है।
आनंद वह क्षण है, आनंद वह स्थिति है, जब सुख और दुख दोनों जा चुके। जो हमने बनाया था, वह सब जा चुका--दुख भी गया, सुख भी गया। हमने बनाए थे नरक, वे भी गए। हमने बनाए थे स्वर्ग, वे भी गए। अब तो सिर्फ वही रह गया, जो सदा है। वहां आनंद है।
भक्त आनंद को उपलब्ध नहीं होता, सुख को उपलब्ध होता है। क्योंकि सपने सुख के बाहर नहीं ले जाते। और जो सपना सुख देता है, उसके पीछे ही दुख देने वाला सपना प्रतीक्षा करता है। वह कहता है, ठीक है, तुम चुक जाओ, तब मैं आ जाऊं। तो सब भक्त रोते हुए भी दिखाई पड़ेंगे! जब उन्हें भगवान की झलक मिल जाएगी, तब वे बड़े प्रसन्न होंगे! और जब झलक नहीं मिलेगी, सपना नहीं बन सकेगा, तब वे छाती पीटेंगे, रोएंगे और विरह की अग्नि उनको सताएगी! वह प्रेमियों की ही पुरानी कथा है। सिर्फ प्रेम का ऑब्जेक्ट, बदल गया है। भगवान को उन्होंने प्रेम का विषय बना लिया है! लेकिन इससे कोई फर्क नहीं पड़ जाता है।

जिन मित्र ने पूछा है कि हमें सुख की जरूरत है! अगर आपको सुख की ही जरूरत है तो आप दुख से कभी छुटकारा नहीं पा सकते। सुख और दुख एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। जो सुख की आकांक्षा करता है, वह दुख में बार-बार गिरता रहेगा। क्योंकि जब वह सुख के सिक्के को उठाएगा तो उसी सिक्के के पीछे का दूसरा पहलू भी साथ चला आएगा। थोड़ी देर में सिक्का बदलेगा और जो नीचे था, वह ऊपर हो जाएगा। इसलिए हर सुख के पीछे दुख छिपा है, हर दुख के पीछे सुख छिपा है। यह वैसे ही, जैसे हर दिन के बाद रात है और हर रात के बाद दिन है। यह ठीक ऐसा ही बदलता रहता है। जो सुख मांगता है, वह दुख से कभी बाहर नहीं हो सकता। लेकिन आनंद कुछ बात और है। आनंद परमात्मा या सत्य को पाने का अनुभव है। फिर उसका कोई अंत नहीं है, फिर वह अनंत है। फिर उसमें दूसरा कोई पहलू नहीं है। फिर उसके पीछे कोई भी नहीं छिपा है।
आनंद से विपरीत शब्द कभी सुना है? यह बड़े आश्चर्य की बात है, आनंद के विपरीत कोई शब्द ही नहीं है! सुख के विपरीत तो दुख है। शांति के विपरीत अशांति है! लेकिन आनंद के विपरीत कोई भी शब्द नहीं है! आनंद का दूसरा पहलू नहीं है। आनंद को बदलने का उपाय नहीं है। आनंद बस सिर्फ आनंद है। उसके पीछे तो कुछ भी नहीं है। उसमें कितने ही गहरे जाएं तो आनंद ही आनंद है। जैसे हम समुद्र के पानी को कहीं से भी चखें और वह खारा है। खारा ही खारा है। और कितने ही गहरे जाएं, और वह खारा है। ऐसे ही आनंद के सागर को हम कहीं से भी चखें, किसी दिशा से जाएं, कितने ही गहरे जाएं, सिर्फ आनंद है। सिर्फ आनंद ही आनंद है।
लेकिन सुख की बात ऐसी नहीं है। सुख को अगर थोड़े ठीक से चखा तो दुख मिल जाएगा। दुख को भी अगर ठीक से गहराई में खोजो तो सुख मिल जाएगा, क्योंकि वे एक ही चीज के दो पहलू हैं। सुख की आकांक्षा में जो डूबा है, वह निश्चित ही उसी भगवान को पैदा करेगा, जो सपने का भगवान है, क्योंकि सपने का भगवान सुख दे सकता है। लेकिन सपने का भगवान दुख भी देगा।
भक्ति सपने के ऊपर नहीं उठ पाती।
और भी एक बात ध्यान में रख लेनी जरूरी है कि सपने में सदा द्वैत है।
सपने में सदा दो हैं। और सत्य में सदा अद्वैत। सत्य में सदा एक। सपने में दो हैं--सपना देखने वाला है और सपना है।
भक्ति में भी सदा दो है--भक्त है और भगवान है। देखने वाला है और दिखाई पड़ने वाला है।
लेकिन सत्य की अनुभूति में दो नहीं हैं। अनुभूति और अनुभोक्ता एक हैं। वहां कोई देखने वाला और दिखाई पड़ने वाला, ऐसे दो नहीं हैं। इसलिए भक्त सदा डरा रहता है। वह भगवान से प्रार्थना करता रहता है कि कभी छोड़ कर मत चले जाना! मुझे छोड़ मत देना! वह सदा यही प्रार्थना करता है कि तुम्हारा सत्संग बना रहे, तुम्हारे पास बैठा रहूं, तुम्हारे चरण दबाता रहूं। भक्त कभी द्वैत के बाहर नहीं उठ पाता। द्वैत के बाहर उठ भी नहीं सकता है, क्योंकि द्वैत के बाहर तभी उठ सकता है, जब भक्ति टूटे, भाव टूटे, मन टूटे। तब द्वैत के बाहर उठ सकता है।
भक्त द्वैत में जीता है।
भक्त कभी यह सोच भी नहीं सकता कि एक ही रह जाए, क्योंकि एक ही रह जाए तो फिर भगवान कहां होगा, भक्त कहां होगा? इसलिए भक्त की आकांक्षा एक के रह जाने की नहीं है! लेकिन जो है, वह एक ही है। फिर सपने को व्यवस्थित, प्लान्ड ड्रीमिंग व्यवस्थित स्वप्न देखने की प्रक्रिया है--योग है, साधना है। उसके दो-तीन सूत्र खयाल में ले लेना चाहिए तो भक्ति की पूरी बात साफ हो सकती है।
अगर आपको व्यवस्थित स्वप्न देखना है... क्योंकि भक्ति व्यवस्थित स्वप्न देखना है। ऐसे साधारणतः सपने तो हम रोज ही देख रहे हैं, लेकिन ये अव्यवस्थित, अराजक। हमें पता नहीं कौन सा सपना हमारे भीतर उतर आएगा। भक्ति जो है, व्यवस्थित, प्लान्ड ड्रीमिंग है। हमें जो सपना देखना है, वही हमें देखना है। और फिर भक्त की अंतिम आकांक्षा यह है कि आंख बंद करके ही नहीं देखना है, खुली आंख से देखना है! तो भक्त को फिर सपने के लिए व्यवस्था करनी पड़ती है।

स्वप्न की व्यवस्था के लिए तीन सूत्र बड़े जरूरी हैं। पहला सूत्र, तो
यह जरूरी है... पहला सूत्र संदेह न हो! जरा भी संदेह होगा, स्वप्न भंग हो जाएगा। श्रद्धा हो, पूर्ण श्रद्धा हो। जरा भी संदेह हुआ तो स्वप्न भंग हो जाएगा। संदेह स्वप्न तोड़ने वाली बहुत अदभुत चीज है। इसलिए संदेह जरा भी भक्ति की दुनिया में प्रवेश नहीं पा सकता। संदेह के लिए वहां उपाय नहीं। वहां अंधी श्रद्धा चाहिए। बिल्कुल अंधी श्रद्धा चाहिए। अंधी श्रद्धा का मतलब, जहां संदेह का कोई उपाय ही नहीं छोड़ा है। मेरे पास आंखें हैं, तो मैं कितनी ही आंखें बंद करूं, यह डर है कि कहीं थोड़ा-सा खोलकर देख न लूं? आंखें होनी ही नहीं चाहिए। तब डर बिल्कुल समाप्त होगा।
अंधी श्रद्धा, ब्लाइंड बिलीफ भक्ति का पहला सूत्र है।
आंख बंद करके स्वीकार कर लो, तब सपना पूरा हो सकता है। तब सपने पर संदेह नहीं आएगा। कि जो मैं देख रहा हूं, यह कहीं सपना तो नहीं है? इतना भी आ गया तो सब बात खंडित हो जाएगी। इसलिए भक्ति का पहला सूत्र हैः पूरी तरह विश्वास।
और अगर भगवान खड़े न हों तो भक्ति के समझने वाले लोग कहेंगे, तुम्हारा विश्वास पूरा नहीं! तुम्हारे विश्वास में कमी है! विश्वास पूरा हो जाना चाहिए। विश्वास पूरा होने का मतलब यह है कि सपने पर भी... सपना है, ऐसा संदेह नहीं रह जाना चाहिए। तभी सपना सत्य मालूम पड़ सकता है।
इसलिए भक्त हजारों साल से लोगों को समझा रहे है--श्रद्धा करो। पूरी श्रद्धा करो, पूरा समर्पण करो। जरा भी अपने को, अपने को पीछे मत रखना सोचने के लिए कि मैं भी हूं। सब सोच-विचार, सब संदेह, सब तर्क छोड़ दो, तब, तब भक्ति पूरी हो सकती है निश्चित ही।
अगर किसी सपने को सत्य मानना हो तो अंधी श्रद्धा पहला सूत्र है।
अगर किसी सपने को तोड़ना हो तो आंख खोलना पहला सूत्र है।
संदेह पहला सूत्र होगा। अंधी श्रद्धा से शुरू होती है भक्ति। फिर अगर सपने को पूरी तरह देखना हो, पूरी तरह देखना हो तो उसमें जरा भी असलियत में और सपने में फर्क न रह जाए। थ्री डायमेंशनल, सपना देखना हो तो उसमें लंबाई, चौड़ाई, ऊंचाई सब दिखाई पड़ने लगें, वह बिल्कुल पूरा दिखाई पड़ने लगे, तो उसके लिए चित्त कमजोर चाहिए और चित्त स्त्रैण चाहिए। इसलिए पुरुष-चित्त के भक्त होने की बड़ी कठिनाई है।
पुरुष-चित्त--पुरुष की नहीं कह रहा हूं। क्योंकि बहुत से पुरुष हैं, जिनके पास स्त्री का चित्त है और बहुत सी स्त्रियां हैं, जिनके पास पुरुष का चित्त है। पुरुष-चित्त सपना नहीं देख सकता ठीक से, क्योंकि पुरुष-चित्त में पुरुष की जो मनःस्थिति है पुरुष की, उसमें आक्रमण है। वह एक्टिव है। और सपने के लिए जरूरी है पैसिव होना, निष्क्रिय होना, ग्रहण करने वाला होना।
स्त्री-चित्त सपना देखने में ज्यादा समर्थ है। वह सिर्फ स्वीकार करती है, वह सिर्फ स्वीकार करती है। इसलिए भक्तों ने सब स्त्रैण उपाय अख्त्यार कर रखे हैं! अगर कोई ठीक भक्त आपको मिल जाए तो आपको लगेगा कि वह कुछ पुरुष से स्त्री की यात्रा पर निकल गया है। उसमें सब स्त्रैण बातें प्रकट होने लगेंगी! उसने चित्त पैसिव-स्त्री का पकड़ लिया है!
ऐसे भक्त भी हैं, जो अपने को स्त्री ही मानने लगे। जो कहते हैं, हम तो सखियां हैं कृष्ण की! और साधारणतः वही मानते हैं वे! अगर उनकी पूरी-पूरी व्यवस्था समझें तो बहुत हैरानी होगी। लेकिन वह व्यवस्था बिल्कुल ठीक है। उसके बिना हो भी नहीं सकता। वे इतने दूर तक निकल गए हैं उस यात्रा पर कि रात कृष्ण को लेकर सोते भी हैं बिस्तर पर!
और यहीं तक मामला नहीं है। वे जो असली भक्त हैं इस तरह के, जिन्होंने
सब स्त्री-भाव स्वीकार कर रखा है कि कृष्ण ही पुरुष है; और हम स्त्री हैं, उसकी स्त्रियां हैं। उनको मासिक-धर्म भी होता है! चार दिन वे उससे भी रुकते है! हो तो नहीं सकता मासिक-धर्म। और कुछ आश्चर्य भी नहीं कि अगर बहुत आटो-हिप्नोसिस हो तो हो भी जाए। तो भी कोई बहुत आश्चर्य नहीं। लेकिन वे चार दिन, जैसे स्त्रियां सब चीजों से दूर रहेंगी, ऐसे वे भी दूर रहेंगे! चार दिन उनका मासिक-धर्म आ जाएगा! ये असली भक्त, जो कि लाजिकल, अंत तक पहुंच

गए बिल्कुल, तर्कगत अंत तक पहुंच गए! जिन्होंने अपने को बिल्कुल स्त्री मान रखा है!
लेकिन भक्त होने के लिए स्त्रैण चित्त अनिवार्य शर्त है। उसका कारण
यह है उसका कारण यह है कि स्त्री का चित्त जो है--स्त्रैण जो चित्त है, वह भावनापूर्ण है, एक। वह तर्कपूर्ण नहीं है।
इसलिए स्त्रियों ने कोई बहुत बड़े पंडित पैदा नहीं किए। जैसे मैंने कहा, ज्ञानयोगी स्त्रियों ने पैदा नहीं किए। उनके मन का वह हिस्सा उतना बलशाली नहीं है। स्त्रियों ने मीरा पैदा की है, थेरेसा पैदा की है और और कुछ लोग पैदा किए। लेकिन स्त्रियों ने पंडित और शास्त्र निर्माण करने वाले--शास्त्र-निर्माता और सिस्टम मेकर्स, और दार्शनिक नहीं पैदा किए! कपिल, या कणाद या महावीर और बुद्ध इस तरह के लोग स्त्रियां पैदा नहीं कर सकतीं। स्त्रियों ने पैदा किए भक्त। और पुरुष ने भी जो लोग स्त्रैण-चित्त के हैं वे भी, ज्ञान उनके लिए मार्ग नहीं रह जाता। भक्ति ही उनके लिए मार्ग रह जाती है। वे भगवान को पति मान कर उसके आस-पास जीने लगते है!
दूसरी शर्त है स्त्रैण-चित्त, कमजोर संकल्प, संकल्पहीनता। संकल्प पूरा छूट जाना चाहिए। आक्रमण का भाव छूट जाना चाहिए। बस सिर्फ जस्ट ए पैसिव अवेटिंग, एक प्रतीक्षा निष्क्रिय-कि आओ, आओ। पुकार, रोना, छाती पीटना--कि आओ! अगर कोई आदमी ज्यादा दिन नहीं, आप प्रयोग करके देखें, सिर्फ इक्कीस दिन काफी हैं। इस तरह के भगवान का दर्शन करने के लिए। इससे ज्यादा की जरूरत नहीं है। इक्कीस दिन के लिए पूरे अंधे होकर स्वीकार कर लें और इक्कीस दिन के लिए--सिर्फ प्यास, पुकार, चिल्लाना, रोना, गाना, छाती पीटना जारी रखें। सुबह से सांझ हो जाए, सांझ से सुबह हो जाए। बस एक ही धुन लगाए रखें कि हे भगवान दर्शन दो, हे भगवान दर्शन दो! भगवान की मूर्ति स्पष्ट कर लें। मन में मूर्ति को लेकर बैठ जाएं। उसी के साथ सोएं, उसी के साथ जागें। उस मूर्ति को खाना खिलाएं, भोजन करवाएं, स्नान करवाएं! उस मूर्ति को जिंदा मान लें और उस मूर्ति के आस-पास अपने भावों को रचते चले जाएं। और श्वास-श्वास उसी में रंग जाए तो इक्कीस दिन से ज्यादा जरूरत नहीं। इक्कीस दिन काफी हैं।
और इक्कीस दिन में आप पाएंगे कि भगवान के दर्शन होने शुरू हो गए! उसका मतलब है, आप पागल होने की सीमा पर पहुंच गए। आप पागल हो गए। आपका दिमाग खराब हो गया। इससे खराब करना हो तो, और जल्दी करना हो खराब तो उपवास कर लेना बहुत अच्छा है। इक्कीस दिन उपवास भी कर लें, क्योंकि जितने कमजोर हो जाएंगे, उतने ही सपने प्रबल हो जाएंगे! उपवास कर लें। बहुत आसानी हो जाएगी नींद खो जाएगी उपवास करने से। इसलिए नींद में जो वक्त चला जाता है और रटन नहीं हो पाती भगवान की, वह भी जारी हो जाएगी। तो नींद में भी रटन होनी चाहिए। नींद में भगवान-भगवान--जो भी आपके भगवान जो आपके भगवान की इच्छा हो, उनकी रटन जारी रहनी चाहिए। नींद कम हो जाएगी--रटन जारी रखें भूखे! उपवास में भूख को भुलाने के लिए भी रटन जारी रखनी पड़ेगी!
जिस दिन कोई उपवास करता है, लोग मंदिर में बैठ जाते हैं, क्योंकि घर रहें तो भूख की याद आती है! फिर मंदिर में भूख की याद नहीं आती! वहां लगे हैं झांझ-मंजीरा पीटने तो वह भूख का पता नहीं चलता! भूख दब जाती है! और भूखा जो मन है--भूखा जो मन है, जितना भूख मन है जितना भूखा मन है, उतना ही कल्पना प्रबल हो जाती है! उतना ही कल्पना प्रबल हो जाती है, उसकी ही कल्पना की शक्ति बढ़ जाती है। और एकांत में चले जाएं। भीड़भाड़ सपना देखने में बाधा डालती है। एकांत में चले जाएं। क्योंकि एकांत में हमारे स्वप्न देखने की क्षमता में स्फुरणा होती है।
जैसे हम यहां इतने लोग बैठे हैं। अगर रात हम सारे लोग यहीं सो जाएं तो कोई बात नहीं। लेकिन इस जगह एक आदमी, रात अंधेरे में सो जाए जरा सा पत्ता खड़का तो उसको लगे, कोई आता है, किसी के पैर की आवाज सुनाई पड़ी! खुद ही शाम को स्नान करके पैंट टांग दिया है रस्सी पर और रात में घर में अकेले हैं तो ऐसा लगे कि कोई आदमी खड़ा है! दो टांगें मालूम पड़ रही हैं! खुद ही टांगा है शाम को यह पेंट!

अकेला आदमी रह जाए तो उसकी, उसका कल्पना प्रगाढ़ हो जाती है। वह कल्पना काम करने लगती है। दूसरा आदमी मौजूद हो तो कल्पना पर रुकावट होगी। इसलिए भक्त को एकांत चाहिए। एकांत मिल जाए और वह रह जाए, उसके भगवान रह जाए तो बस फिर ठीक है। बहुत जल्दी मस्तिष्क रुग्ण हो सकता है।
भक्तों ने और भी इस तरह के उपाय किए, जिनसे मस्तिष्क की, यह भाव की क्षमता तीव्र हो जाए--गांजा पिया है, अफीम खाई है, चरस पिया है। और अब अमेरिका में नये वैज्ञानिक साधन खोज लिए हैं। एल एस डी, मैस्कलीन, मारिजुआना--और भी नई चीजें खोज ली हैं! वे चीजें और भी अच्छी हैं। अगर किसी को भक्ति में जल्दी जाना हो तो वैज्ञानिक विधियां और अच्छी हैं, क्योंकि वैज्ञानिक विधि का इतना ही मतलब होता है--अवैज्ञानिक विधि बैलगाड़ी के ढंग से चलती है, वैज्ञानिक विधि जेट प्लेन की तरह चलती है, तेजी से जाती है। अल्डुअस हक्सले ने एक किताब लिखी है--डोर्स ऑफ न्यू परसेप्शन, "नये दर्शन के द्वार" या "दर्शन के द्वार" और उसमें उसने यह एक सलाह दी है कि अब कोई मीरा और कबीर की तरह मेहनत करने की जरूरत नहीं है। एल एस डी का उपयोग कर लेने से, लिसर्जिक एसिड को ले लेने से फौरन आदमी भक्ति की अवस्था में पहुंच जाता है! फिर जो भी देखना चाहे, देख लेता है! जो भी देखना चाहे! और जो भी मान ले, वह सत्य हो जाता है! क्योंकि ये जो केमिकल ड्रग्ज हैं, ये मस्तिष्क में जाकर तत्काल उसे आक्रांत कर लेते हैं समस्त तर्कबुद्धि को, श्रद्धापूर्ण हो जाती है! समस्त विचार को क्षीण कर देते हैं। संदेह नष्ट हो जाता है। और जैसे रात में सपना हम देखते हैं, ऐसा ही मन उस हालत में आ जाता है, जबकि वह चित्र पैदा करने लगता है।
तो जिन लोगों ने एल एस डी लिया है--अब तो लाखों, करोड़ों लोगों ने लिया है। जिन लोगों ने एल एस डी लिया है, उनकी अगर बातें सुनें, पढ़ें तो बहुत हैरानी होती है। उनके लिए ऐसे रंग दिखाई पड़ने लगते हैं, जो हमें कभी दिखाई नहीं पड़े! उन्हें ऐसी प्रतिमाएं दिखाई पड़ने लगती हैं, जो हमें कभी दिखाई नहीं पड़ी! उन्हें ऐसे पक्षी उड़ते मालूम होने लगते हैं, जो कभी नहीं उड़े! उन्हें ऐसी ध्वनियां सुनाई पड़ने लगती हैं, जो हमने कभी नहीं सुनीं! अनाहद नाद वगैरह बहुत सुनाई पड़ता है, एल एस डी लेने से! बड़े अदभुत संगीत सुनाई पड़ने लगते हैं! अदभुत फूल खिलने लगते हैं! और अगर कोई भगवान का भक्त हो तो, भगवान तत्काल मौजूद हो जाते हैं। एल एस डी पूर्ण श्रद्धा दे देता है। चित्त को स्त्रैण बना देता है, और समस्त विचार की शक्ति को छीन लेता है। यह केमिकल ड्रग है।
लेकिन अब जो खोज-बीन हो रही है, वह यह बताती है कि लंबे उपवास से भी मनुष्य के मन में इसी तरह का रासायनिक परिवर्तन होता है।
लंबे उपवास से भी मनुष्य में रासायनिक परिवर्तन होता है। और एल एस डी देने से भी रासायनिक परिवर्तन होता है। ब्रह्मचर्य को बहुत जोर से, जबरदस्ती से साधने से भी रासायनिक परिवर्तन होता है। और प्राणायाम करने से भी रासायनिक परिवर्तन होता है। अब इस पर जो खोजें चल रही हैं, वे बहुत घबड़ाने वाली हैं। वे यह कहती हैं कि ये सब केमिकल चेंज है।
एक आदमी जब बहुत जोर से श्वास लेकर प्राणायाम करता है तो उसके शरीर का पूरा केमिकल बैलेंस, बदल जाता है, क्योंकि आक्सीजन ज्यादा हो जाती है और कार्बन डायआक्साइड कम हो जाती है। और उसके व्यक्तित्व का भीतर का सारा रासायनिक संतुलन बिगड़ जाता है। वह रासायनिक संतुलन बिगड़ जाए तो चित्त के सपने देखने की क्षमता बहुत तीव्र हो जाती है।
यह जो नई केमिकल रिवोल्यूशन हो रही है सारी दुनिया में, यह जो नई रासायनिक क्रांति की एक धारणा आ रही है कि अब भगवान से मिलने के लिए एल एस डी का इंजेक्शन ले लेने की जरूरत है, या एक गोली खा लेनी की जरूरत है, या मारीजुआना ले लेने की जरूरत है! अब कोई जरूरत नहीं है साधना करने की!
तो अगर भक्ति साधना है तो अब भविष्य में भक्ति कोई नहीं करेगा। अब भविष्य में तो केमिकल्स टेबलेट मिल जाएगी केमिस्ट की दुकान पर, जिसको लेकर आप खा लेंगे और भक्त हो जाएंगे! नाचने लगेंगे, गाने लगेंगे! एकदम भगवान दिखाई पड़ने लगेंगे! अपने-अपने भगवान दिखाई पड़ेंगे। ईसाई को

क्राइस्ट दिखाई पड़ेगा, कृष्ण वाले को कृष्ण दिखाई पड़ेगा, राम वाले को राम दिखाई पड़ेगा!
अभी एक आदमी न्यूयार्क में एल एस डी लिया। अपनी चालीसवीं मंजिल के मकान में सोया। उसको सदा सपना आता था कि वह आकाश में उड़ता है।
कई लोगों को आते हैं। जमीन पर रहने वालों को आकाश में उड़ने का सपना आए,
यह कोई आश्चर्यजनक नहीं, आएगा। किसके मन में इच्छा नहीं होती कि उड़ जाए। महत्वाकांक्षी चित्त को उड़ने का सपना आता है! वह एंबीशन का प्रतीक है। वह इस बात का प्रतीक है हम सब नीचे की चीजों से ऊपर उड़ गए! सब नीचे छूट गए, हम ऊपर उड़ रहे हैं!
उसको भी सपना आता था कि वह आकाश में उड़ता है। एल एस डी लेकर बड़ी मुश्किल हो गई। एल एस डी लेकर उसकी आंखों में फौरन दिखाई पड़ा कि मैं पक्षी हो गया हूं। और वह अपनी चालीसवीं मंजिल के मकान से निकल कर उड़ गया! हड्डी- पसली नहीं मिली! क्योंकि एल एस डी इतना भ्रम दे देता है कि जो भी मालूम पड़ता है, वह सच मालूम पड़ता है। उसमें संदेह होता ही नहीं, क्योंकि चित्त बिल्कुल ही संदेह से मुक्त हो जाता है। उसे एक भी बार खयाल नहीं आया कि मैं पक्षी कैसे हो सकता हूं!
सपने में आपको खयाल आया है कभी? जब आप सपने में पक्षी हो जाते हैं, आपको खयाल आया है कि यह मैं क्या देख रहा हूं! सपने में मैं पक्षी कैसे हो सकता हूं? नहीं, सपना पूर्ण विश्वास से भरा होता है। सपने में कभी शक नहीं आता कि मैं पक्षी कैसे हो सकता हूं? हां, जागने पर आता है। सुबह जागकर आप सोचते हैं कि क्या फिजूल की बातें मैंने देखी कि मैं पक्षी हो गया था! कि घोड़ा हो गया था! कि यह हो गया था, कि वह हो गया था!
और मजा यह है कि सपने में, इतना असंदिग्ध आस्था होती है कि अगर पक्षी
से एकदम से घोड़ा हो जाए तो भी शक नहीं आता कि अभी पक्षी था घोड़ा कैसे हो गया? नहीं, सपने में संदेह होता ही नहीं। इसलिए मैंने कहा सपना देखने के लिए संदेह छोड़ना पहली शर्त है। पूर्ण श्रद्धा पहली शर्त है। एल एस डी पूर्ण श्रद्धा पैदा कर देता है!
वह आदमी उड़ गया। उड़ तो गया, लेकिन पक्षी तो वह नहीं था आदमी। गिरा और
मर गया! लेकिन हो सकता है कि मरते वक्त वह यही समझ रहा हो कि पक्षी ही मर रहा हूं, क्योंकि वह तो एल एस डी की हालत में था।
साधुओं ने, भक्तों ने, बहुत पुराने जमानों से, वेद के युग से लेकर आज तक--वेद में जिसे सोमरस कहते हैं, वह आज कावैज्ञानिक एल एस डी मैस्कलिन से भिन्न नहीं है! सोमरस से लेकर एल एस डी तक भगवान को खोजने वाले ने सब तरह के नशों का उपयोग किया है! और सब तरह के नशों में उसने और सूक्ष्मतम नशे जोड़े हैं, सूक्ष्मतम नशे जोड़ते गया है!
संगीत भी नशा लाने में उपयोगी है!
अगर जोर से झांझ-मंजीरा पीटा जाए, बीस घंटे आपके चारों तरफ, तो आपका सिर घूमने लगेगा। उसको तो करके देख सकते हैं। इसे करने में कोई कठिनाई नहीं। और अगर बीस आदमी नाच रहे हों तो इक्कीसवां आदमी कितनी देर तक बिना नाचे बैठा रहेगा? थोड़ी देर में उसके हाथ-पैर फड़फड़ाने लगेंगे। उस आदमी में केमिकल चेंज, होना शुरू हो गया! उसको नशा पकड़ने लगा! और जब बीस आदमी झांझ-मंजीरा पीट रहे हों, उसके कानों पर झांझ-मंजीरा पड़ रहा हो तो बुद्धि जो है, कुंठित हो जाती है, तर्क खो जाता है! वह आदमी भी नाचने में लग गया और तब पैर फड़कने लगते हैं, और नाच शुरू हो जाता है! और सपने दिखाई पड़ने लगते हैं तो सब, सब फर्क हो जाता है!
संगीत का उपयोग किया गया है। भक्तों ने बड़ा उपयोग किया है संगीत का, क्योंकि संगीत बहुत मादक है! संगीत बहुत शराब के निकट है! ध्वनियों के निरंतर आघात से कान पर नशा पैदा किया जा सकता है।
भक्तों ने सौंदर्य का उपयोग किया है! सौंदर्य भी बहुत मादक हो सकता है!
सुगंध का उपयोग किया है, भक्तों ने! वह भी बहुत मादक हो सकता है!
भक्तों ने उन सब चीजों का उपयोग किया है, जो चित्त को नशे में ले जाएं
और चित्त की तर्क-प्रतिभा को नष्ट कर दें! सोचने-विचारने को मिटा दें! और

ऐसी हालत आ जाए कि जहां जो हो रहा है, उस पर पक्का भरोसा और विश्वास, बस फिर भगवान के दर्शन होने में कोई कठिनाई नहीं।
मैं आपसे कहना चाहता हूं, भक्ति से कोई कभी भगवान तक नहीं पहुंचा।
भक्ति से उस भगवान तक लोग पहुंच गए हैं, जिस तक उन्होंने पहुंचना चाहा था! उस भगवान तक नहीं, जो है।
भाव छोड़ देना पड़ेगा। भक्ति भी छोड़ देनी पड़ेगी, क्योंकि भक्ति और भाव
मन का ही एक हिस्सा है।
मन के पार जाना पड़ेगा। मन के ऊपर उठना पड़ेगा। मन को ट्रांसेंड किए बिना, मन के ऊपर उठे बिना, सत्य का कोई अनुभव नहीं हो सकता।

एक मित्र ने पूछा है कि आप कहते हैं, सत्य को शब्दों में नहीं कहा जा सकता?
नहीं कहा जा सकता। उसको जिसे हम मन के ऊपर उठ कर जानें, उसे कहने का कोई उपाय नहीं, क्योंकि कहने के लिए मन की ही जरूरत पड़ती है। मन के माध्यम से जिसे नहीं जाना, उसे मन के माध्यम से कहना भी संभव नहीं है।
लेकिन उन्होंने पूछा है कि दो ओर दो चार होते हैं, यह तो सत्य है, यह तो
आप कह ही सकते हैं?
उनको पता नहीं है कि दो और दो चार सत्य नहीं है, सिर्फ मान्यता है। सत्य नहीं है, सिर्फ हमारी मान्यता है। दो और दो पांच भी हो सकते हैं। और दो और दो छह भी हो सकते हैं। हमारी मान्यता की बात है। उनको शायद पता नहीं है गणित का बहुत। आइंस्टीन तीन ही संख्या का उपयोग करता था--एक दो तीन! वह कहता था कि दस तक की संख्या मानने की कोई जरूरत नहीं है।
है भी नहीं कोई जरूरत। आपने कभी सोचा है कि दस तक की संख्या ही क्यों होती है? फिर दस का ही फैलाव है! शायद आपको खयाल ही न हो। दस तक की संख्या का कारण बहुत अदभुत है। कोई बहुत गणित का कारण नहीं है। आदमी के हाथ में दस अंगुलियां हैं, इतना ही कारण है! और कोई कारण नहीं है, क्योंकि आदमी ने अंगुलियों से गिनना शुरू किया तो वह पहले दस-दस की गिनती पकड़ गई! इसलिए सारी दुनिया में दस की संख्या चलती है! क्योंकि सारी दुनिया में ही दस अंगुलियां होती हैं। अब दस उंगलियां होना कोई, लेकिन उससे दस की संख्या बन गई! दस की संख्या बनने की वजह से दो और दो चार होते हैं!
आइंस्टीन कहता था, एक दो तीन काफी हैं! अगर तीन की संख्या मान ली जाए
तो दो और दो चार कैसे होंगे? क्योंकि चार का तो अंक ही न रहा। एक दो तीन। तीन के बाद आएगा; दस ग्यारह बारह तेरह! तेरह के बाद आएगा बीस इक्कीस बाईस तेईस! दो और दो कितने होंगे? दो और दो दस होंगे, अगर तीन की संख्या मान ली जाए! यह सब मान्यता की बातें है। इनका सत्य से कुछ लेना-देना नहीं।
गणित बिल्कुल मान्यता है। हमारा माना हुआ खेल है। संख्याओं का खेल है। हमने मान लिया है, वैसा चल रहा है।
भाषा हमारी, माना हुआ खेल है। लैंग्वेज बिल्कुल ही खेल है। हमने मान रखा है, खेल चल रहा है। अगर एक आदमी भी इनकार कर दे तो हम उसको राजी नहीं कर सकते। हम कहते हैं कि यह हाथ है। और एक आदमी कह दे कि हम हाथ इसे क्यों मानें? तो दुनिया की कोई ताकत उसे नहीं समझा सकती कि हाथ इसे मानना जरूरी है? वह कहता है हम हैंड मानते हैं तो हैंड मानना पड़े।
और वह कहे कि हम यह भी नहीं मानते तो दुनिया में कोई हजारों भाषाएं हैं। जिसमें हाथ के लिए अपना-अपना खेल है। हजारों खेल हैं। सब भाषाएं खेल हैं। कोई जबरदस्ती नहीं है कि यह हाथ ही क्यों है? यह जो है, वह है। बाकी शब्द आपका खेल है। आप जो चाहें, इस पर लगा दें। इससे कोई झंझट नहीं आती। हाथ कभी कहता नहीं कि मैं कौन हूं? आपकी जो मरजी, वह कहें। हम दस आदमी तैयार हो जाते हैं कि हम इसको हाथ कहेंगे। हम दस के लिए भाषा कारगर हो जाती है।
भाषा मान्यता है, सत्य मान्यता नहीं है।
इसलिए जहां तक भाषा है, वहां तक सत्य का पता नहीं चलता। लेकिन मन के छूटते ही भाषा भी छूट जाती है। जहां तक गणित है, वहां तक सत्य का पता नहीं

चलता। लेकिन मन से छूटते ही गणित भी छूट जाता है। मन गया कि सब गया। और तब जो शेष रह जाता है, वह क्या है? इसे जानने के सिवाय और कोई उपाय नहीं। मेरे कहने से कुछ पता नहीं चले। किसी और के कहने से कुछ पता ना चले। हां, इतना ही पता चल सकता है कि शायद कुछ हो, जो हमारी घर की दीवालों के बाहर भी है। आप जाएं घर की बाहर दीवाल की तरफ--बाहर खड़े हो जाएं। मैं इतना ही कह सकता हूं, घर की दीवालों के भीतर नहीं है। इसलिए परमात्मा के संबंध में जो भी कहा गया है, वह सदा निषेधात्मक है, निगेटिव है। वह नेति-नेति है। इतना ही कहा जा सकता है--यह भी नहीं है, यह भी नहीं है। इतना ही कहा जा सकता है--नॉट दिस, नॉट दैट।
तो आप पूछेंगे, क्या है? वह नहीं कहा जा सकता। इतना ही कहा जा सकता है
कि इस मकान की यह दीवार में भी नहीं है--इस दीवाल में भी नहीं है। इस दीवाल में भी नहीं है! आप पूछें, फिर किस दीवाल में है? तो मुझे चुप रह जाना पड़े।
दीवार में नहीं है। दीवाल के बाहर है। और आप सब दीवालों के बाहर चले जाएं तो मिल जाए।
इसलिए सत्य की सारी खोज निषेध की खोज।
परमात्मा की सारी खोज निषेध की खोज।
जो आदमी सबको इनकार कर पाता है, अंततः उसे उपलब्ध हो जाता है, "जो है"। लेकिन अगर आप इनकार करने में कमजोर हैं और आपने कहा, कैसे इनकार करूं? भक्ति को कैसे इनकार करूं? ज्ञान को कैसे इनकार करूं? कर्म को कैसे इनकार करूं? पूजा को, पंडित को कैसे इनकार करूं? तो आप पंडित, पूजा, भक्ति, ज्ञान की दीवारों के भीतर खड़े रह जाएंगे। सत्य के पास नहीं पहुंच सकते। और ये सब खेल हैं।
भक्ति भी खेल है भाव का।
और ज्ञान खेल है विचार का।
और कर्म खेल है मन के कर्म की पर्त का।
कल हम उस तीसरी पर्त के बाबत विचार करेंगे कि यह कर्म का खेल क्या है?
और अगर इन सारे खेलों के बाहर आप हो जाएं। हो सकते हैं। हैं ही। लेकिन आपको पता नहीं, खयाल नहीं, स्मरण नहीं। अगर बाहर हो जाएं तो जिसे आप जानेंगे-- जिसके लिए कोई शब्द बताने वाला नहीं है। जिसके लिए कोई चित्र बताने वाला नहीं। जिसके लिए कोई मूर्ति बताने वाला नहीं है। जिसके लिए कोई इशारा नहीं किया जा सकता कि वह रहा, क्योंकि इशारे में बड़ी गड़बड़ है।

अंतिम बात कहूं।
इशारे में बड़ी भूल है। अगर मैं कहूं, वह रहा, तो इशारा सदा सीमित कर देता है, क्योंकि इशारे के बाहर जो है, फिर वह कौन है? हम किसी सीमित चीज के संबंध में इशारा कर सकते हैं कि वह रहा। कह सकते हैं, वह रहा, लेकिन फिर बाकी जो इशारे के बाहर रह गया, वह क्या है?
परमात्मा के संबंध में इशारा नहीं हो सकता अंगुली बता कर। उसके संबंध में इशारा हो सकता है, मुट्ठी बांध कर कि यह रहा। यह रहा का मतलब यह है कि हम कहीं इशारा नहीं कर सकते उसके लिए। इशारा करेंगे गड़बड़ हो जाएगा। अगर हमने कहा, सम व्हेयर, तो फिर वह एवरी व्हेयर नहीं हो सकता। अगर हमने कहा, वहां है तो सब जगह कहां कैसे होगा? जिसे सब जगह होना है, जिसे एवरी व्हेयर होना है, उसे नो व्हेयर होना पड़ेगा। जिसे सब जगह होना है, उसे कहीं भी नहीं होना पड़ेगा। इसलिए कोई इशारा काम नहीं करता। कोई संकेत काम नहीं करता। लेकिन फिर क्या रास्ता है?
सब संकेतों को गिरा दें, सब इशारों को गिरा दें।
एक मित्र ने पूछा हैः आप कहते हैं, ज्ञान भी मार्ग नहीं, भक्ति भी मार्ग नहीं। कर्म भी मार्ग नहीं, आपका मार्ग क्या है?
मैं यह कह रहा हूं, मार्ग ही नहीं है।
तो मेरा मार्ग मत पूछें, क्योंकि मैं अपना मार्ग बता दूं तो वह चौथा मार्ग हो जाएगा। वह भी नहीं है। मार्ग ही नहीं है। और जो आदमी समस्त मार्गों के बाहर खड़ा हो जाता है, वह "वहां" पहुंच जाता है। मार्ग के बाहर होने के अतिरिक्त और कोई मार्ग नहीं है।

मेरी बातों को इतनी शांति और प्रेम से सुना, उससे अनुगृहीत हूं। और अंत में सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

शून्य के पार
चौथा प्रवचन

कर्म: सबसे बड़ा भ्रम
(9 मार्च 1970 सुबह)

मेरे प्रिय आत्मन्!
कर्म-योग पर आज थोड़ी बात करनी है।
बड़ी से बड़ी भ्रांति कर्म के साथ जुड़ी है। और इस भ्रांति का जुड़ना बहुत स्वाभाविक भी है।
मनुष्य के व्यक्तित्व को दो आयामों में बांटा जा सकता है। एक आयाम है--बीइंग का, होने का, आत्मा का। और दूसरा आयाम है--डूइंग का, करने का, कर्म का। एक तो मैं हूं। और एक वह मेरा जगत है, जहां से कुछ करता हूं।
लेकिन ध्यान रहे, करने के पहले "होना" जरूरी है। और यह भी खयाल में ले लेना आवश्यक है कि सब करना, "होने" से निकलता है। करना से "होना" नहीं निकलता। करने के पहले मेरा "होना" जरूरी है। लेकिन मेरे "होने" के पहले करना जरूरी नहीं है।
कर्म जो है, वह परिधि है। अस्तित्व जो है, वह केंद्र है।
अस्तित्व आत्मा है।
कर्म हमारा जगत के साथ संबंध है।
ऐसा समझें, एक सागर पर बहुत लहरें हैं। सतह पर बहुत हलचल है। लहरें उठती हैं, गिरती हैं। ये लहरों का जो फैला हुआ जाल है, यह कर्म का जाल है।
सागर सतह पर बड़ा कर्मरत है, लेकिन नीचे उतरें तो सन्नाटा है। और नीचे जाएं तो बिल्कुल सन्नाटा है। और नीचे जाएं तो कोई लहर नहीं, कोई हलचल नहीं।
गहरी चुप्पी है। सागर की लहरों के नीचे सागर का "होना" है।
"होना" गहरे में है। कर्म का जाल, लहरों का जाल ऊपर परिधि पर है।
प्रत्येक व्यक्ति की परिधि पर, सर्कमफरेंस पर, कर्म का जाल है। और प्रत्येक व्यक्ति के केंद्र पर होने का सागर है।
लेकिन जब हम किसी व्यक्ति को देखते हैं तो उसका "होना" दिखाई नहीं पड़ता, उसका करना ही दिखाई पड़ता है! "होना" दिखाई पड़ भी नहीं सकता।
सागर के पास जब आप जाते हैं तो आप कहते हैं कि सागर दिखाई पड़ रहा है। सागर दिखाई नहीं पड़ता, दिखाई पड़ती हैं सिर्फ लहरें। सागर आपको कभी दिखाई नहीं पड़ा होगा। लहरें ही दिखाई पड़ी होंगी। लहरें सागर नहीं हैं, क्योंकि कोई लहर सागर के बिना अस्तित्व में नहीं हो सकती। अगर हम लहर को सागर से अलग बचाना चाहें तो लहर मर जाएगी। लेकिन सागर बिना लहर के हो सकता है। सागर बिना लहर के मर नहीं जाएगा। इसलिए मूल सागर है, लहर बाइ-प्रोडक्ट है, लहर उप-उत्पत्ति है। इसलिए लहर नहीं हो सकती सागर के बिना। सागर बिना लहर के हो सकता है।
कर्म नहीं हो सकता बिना आत्मा के बिना। लेकिन आत्मा बिना कर्म के हो सकती है। अगर मैं नहीं हूं तो मेरे सब कर्म खो जाएंगे। लेकिन मेरे सब कर्म खो जाएं तो भी मैं नहीं खो जाता हूं।
इस बुनियादी भेद को सबसे पहले समझ लेना जरूरी है। लेकिन फिर भी जो मैं हूं, वह आपको दिखाई नहीं पड़ता। आप जो हैं, वह मुझे दिखाई नहीं पड़ते। आप जो करते हैं, वही दिखाई पड़ता है! मैं जो करता हूं, वही दिखाई पड़ता है! करना दिखाई पड़ता है। "होना" छिपा है। करना दृश्य है, "होना" अदृश्य है। करना ज्ञात है, "होना" अज्ञात है।
हमारे भीतर ये दो दिशाएं हैं एक "करने" की, दृश्य की, लहरों की--जो दूसरों को दिखाई पड़ सकेगा, ज्ञात हो सकेगा। और एक "होने" की, जो किसी को ज्ञात नहीं हो सकेगा, जो किसी को भी दिखाई नहीं पड़ सकेगा, जो सदा छिपा है, सदा पीछे गहरे में, दी हिडेन, वह सदा पीछे छुपा है--गूढ़।
ये दो हमारी दिशाएं हैं "होने" की, अस्तित्व की। इन दोनों दिशाओं में कौन मूल है, इसे अगर हम न पहचान पाए तो बहुत भूल हो जाएगी। क्योंकि यह बड़े

नियम की बात है कि गौण के द्वारा मूल को नहीं पाया जा सकता। मूल के द्वारा गौण को पाया जा सकता है।
जैसे कि हम गेहूं बो देते हैं। फिर गेहूं की फसल आती है और गेहूं के साथ भूसा भी आता है। भूसा मूल नहीं है, परिधि है, बाहर की खोल है। गेहूं मूल है--भीतर का छिपा हुआ हिस्सा है। गेहूं के साथ भूसा पैदा होता है। लेकिन अगर आप भूसा बो दें तो गेहूं पैदा नहीं होगा। गेहूं बो दें, भूसा आ जाएगा। अपने आप आ जाएगा। लेकिन भूसा बो दें तो गेहूं तो आएगा ही नहीं, भूसा भी नष्ट हो जाएगा।
मनुष्य का कर्म जो है, वह भूसे की तरह है। और मनुष्य का "होना" जो है,
वह गेहूं की तरह है। अगर भीतर "होना" है तो कर्म बदल जाएगा। जैसा "होना" होगा, वैसा कर्म हो जाएगा। लेकिन बाहर से कर्म बदल लें तो वैसा "होना" नहीं बदल जाएगा।
मेरा जोर "होने" पर है, बीइंग पर। लेकिन कर्मयोग का जोर "कर्म" पर है, "होने" पर नहीं, बीइंग पर नहीं है, डूइंग पर। कर्मयोग कहता है करो--ऐसा करो! ऐसा करोगे तो ऐसे हो जाओगे। गलत है यह बात।
"ऐसे" हो जाओगे तो "ऐसा कर्म" हो सकता है। लेकिन ऐसा करोगे तो ऐसे नहीं
हो जाओगे। लेकिन चूंकि दिखाई कर्म पड़ता है, इसलिए भ्रांति हो जाती है। कोई महावीर हमारे बीच से निकलें तो दिखाई पड़ेगा कि महावीर नग्न हो गए! कर्म है। वस्त्र पहनना एक कर्म है। नग्न हो जाना एक कर्म है। महावीर नग्न हो गए, ऐसा हमें दिखाई पड़ेगा। और फिर दिखाई पड़ेगी महावीर की शांति और महावीर का आनंद और उनके चारों तरफ रहस्य की बहती हुई हवाएं और उनकी आंखों में गहराई। और वह सब दिखाई पड़ेगा। और दिखाई पड़ेगा यह कर्म कि महावीर नंगे हो गए! हमारे मन में भी खयाल हो सकता है कि अगर मैं भी नग्न हो जाऊं तो जो महावीर को मिला था, वह मुझे भी मिल जाएगा!
हम भूसे से गेहूं की तरफ चले। पकड़ लिया हमने कर्म को। महावीर क्या खाते हैं, क्या पीते हैं--यह कर्म है। देखा कि क्या खाते हैं, क्या पीते हैं? कब खाते हैं, कैसे खाते हैं? कब नहीं खाते हैं? कैसे चलते हैं? कैसे उठते हैं? ये कर्म हैं। कैसे बोलते हैं? कैसे नहीं बोलते हैं? यह सब हमने देखा। हमने परिधि को पूरा जांच लिया। हमने कहा कि यह परिधि हम भी पूरी कर लें तो जो इस आदमी के भीतर घटा है, वह हमारे भीतर भी घट जाएगा!
तो हम भी उठने लगें ब्रह्ममुहूर्त में! हो जाएं नग्न। यह खाएं, यह न खाएं। ऐसे चलें, ऐसे न चलें। यह हम सब कर लें पूरा। ठीक महावीर जितना करते हैं, उतना कर लें पूरा, इंच भर कमी न रह जाए। तो भी भीतर वह पैदा नहीं होगा, जो महावीर के पैदा हुआ है, क्योंकि हम उलटे चल पड़े। घटना को हमने उलटा देखा। महावीर के भीतर--पहले कुछ भीतर हुआ है, और तब बाहर फैला है। हमने बाहर से पकड़ा और भीतर चले! भीतर से बाहर की तरफ आ सकते हैं, बाहर से भीतर की तरफ नहीं जा सकते। बाहर भूसा है, भीतर गेहूं है।
महावीर की आंखों में जो शांति दिखाई पड़ती है, महावीर के अस्तित्व में
जो निर्मलता दिखाई पड़ती है उनके होने में जो एक इनोसेंस--एक निर्दोष साधा है, वह पहले है। चूंकि भीतर एक निर्दोष होने का जन्म हो गया है, इसलिए बाहर वे नग्न हो सके। भीतर की निर्दोषता बाहर की नग्नता बन सकी। लेकिन बाहर की नग्नता भीतर की निर्दोषता नहीं बन सकती।
इसे जितना हम ठीक से समझ लें, उतना ही सत्य की दिशा में गति करना आसान
हो जाएगा। बड़े से बड़ा उलझाव इससे पैदा होता है। लोग मेरे पास आते हैं, वे कहते हैं, हम क्या करें? वे कभी भी नहीं पूछते कि हम क्या हो जाएं! वे पूछते हैं, हम क्या करें?
मैं अभी एक गांव में ठहरा था। गांव का कलेक्टर मुझसे मिलने आया और उसने कहा, कि मैं भी आप जैसी चादर अगर पहन लूं कुछ लाभ होगा? कुछ भी लाभ नहीं होगा। चादर को थोड़ा-बहुत नुकसान हो जाएगा!
वह कहने लगा, नहीं, आप मजाक करते हैं। मुझे ठीक से बताएं। आप उठते कब हैं? आप खाते क्या हैं? मैं भी वैसा ही करूं!
वह आदमी जिज्ञासु है, खोजता है। गलत छोर से खोजता है।

लेकिन हजारों साल से मनुष्य-जाति गलत छोर से खोज रही है। वही आदमी कसूरवार नहीं है। और स्वाभाविक ही है यह भूल। यह इसलिए स्वाभाविक है कि कर्म दिखाई पड़ता है, होना दिखाई नहीं पड़ता। करे भी क्या कोई! जो दिखाई पड़ता है, उसी से चलने की बात खयाल में आती है। जो नहीं दिखाई पड़ता, वहां से चलें कैसे?
लेकिन मैं आपको कहना चाहता हूं कि अगर यह हमारी समझ में आ जाए कि जो दिखाई पड़ता है, वे तरंगें हैं--बाहर की। और भीतर सागर, जहां तरंग ही नहीं, निस्तरंग है। वहां से ही सारी गति है, वहां से ही सारा होना है। हमारा व्यक्तित्व भीतर से फैलता हुआ है। हम निरंतर भीतर से फैलते चले जा रहे हैं। एक छोटा सा बीज हम बोते हैं, फिर वह अंकुरित होता है। बड़ा वृक्ष होता चला जाता है। एक छोटा सा बीज भीतर से बाहर की तरफ फैलता है-फैलता है, फैलता चला जाता है। मां के पेट में एक छोटा सा अणु आता है, जिसे आंख से देखा नहीं जा सकता। फिर वह अणु फैलता है फैलता है--फैलता है और एक व्यक्ति निर्मित हो जाता है! सब भीतर से बाहर की तरफ फैल रहा है।
अभी वैज्ञानिकों ने एक नवीनतम खोज की है, वह बहुत महत्वपूर्ण है। वह
है एक्सपैंडिंग यूनिवर्स! पहले हम सोचते थे, कि जगत जैसा है, वैसा ही है। वही है। ठहरा हुआ है। लेकिन नवीनतम अनुभव ने बड़ी हैरानी कर दी। जगत फैल रहा है, जैसे कि कोई गुब्बारे में हवा भर रहा हो और गुब्बारा बड़ा होता जा रहा है! और फैलता जा रहा हो, फैलता जा रहा हो। जगत फैल रहा है! और प्रतिपल करोड़ों मील की रफ्तार से तारे दूर भागे जा रहे हैं-परिधि की तरफ फैलते जा रहे हैं, केंद्र से हटते जा रहे हैं!
जगत जो है, एक्सपैंडिंग है। आज से दो करोड़ वर्ष पहले जगत छोटा था। तारे करीब-करीब थे। आज जगत बड़ा है, कल और बड़ा होगा! और अंतहीन फैलाव है! हमारे पास एक शब्द है ब्रह्म। ब्रह्म बहुत कीमती शब्द है। और आज नहीं कल, विज्ञान को इस शब्द को स्वीकार कर लेना होगा। इसको इसलिए स्वीकार कर लेना होगा कि ब्रह्म का मतलब होता है दी एक्सपैंडिंग, जो फैल रहा है, फैल रहा है, फैलता ही जा रहा है! ब्रह्म का मतलब होता है, जो विस्तीर्ण हो रहा है, जो फैलता जा रहा है! जिसके फैलाव का कोई अंत नहीं है! जो कहीं रुकेगा नहीं, जो फैलता ही चला जा रहा है!
इस बात को समझा जा सकता है कि कभी सारा जगत जैसे एक छोटा सा बच्चा मां
के पेट में एक अणु होता है, और एक छोटा सा बीज एक बड़े वृक्ष का जरा सा बीज होता है! आश्चर्य नहीं, निश्चित ही ऐसा हुआ होगा। कभी यह सारा, इतना बड़ा जगत एक छोटा सा बीज रहा होगा। फैलता गया, फैलता गया। आज इतना बड़ा है, कल और बड़ा--कल और बड़ा! भीतर से बाहर की तरफ फैलाव है। भीतर से शक्ति के स्रोत हैं, वे फूटते जाते हैं और बाहर की तरफ फैलते जाते हैं।
लेकिन मनुष्य के जीवन में एक भूल हो जाती है। और वह भूल यह हो जाती है,
हम बाहर तो देखते हैं और सोचते हैं कि बाहर से भीतर की तरफ चलें!
कर्मयोग बाहर से भीतर की तरफ चलने की भ्रांति है।
कर्मयोग की मान्यता यह है कि कुछ करो। करोगे तो हो सकोगे। कर्मयोगी कहता है, बैठ मत जाना, विश्राम मत करना। बैठ जाओगे, विश्राम करोगे, पहुंच न सकोगे। कुछ करो और ठीक करो, क्योंकि गलत किया तो भटक जाओगे। इसलिए कर्मयोग गहरे में शुभ और अशुभ का चुनाव है, एक च्वाइस है-यह है ठीक, यह है गलत! गलत को छोड़ो और ठीक को करो। गलत को छोड़ते जाओ और ठीक को करते जाओ। एक दिन ऐसा आएगा कि गलत छूट जाएगा और ठीक ही ठीक शेष रह जाएगा। जिस दिन ठीक ही ठीक शेष रह जाएगा, उसी दिन परमात्मा उपलब्ध हो जाएगा। ऐसा कर्मयोग मानता है।
यह मानना बिल्कुल ही गलत है। बिल्कुल ही गलत इसलिए है कि इसमें बहुत
से इंप्लिकेशंस हैं, बहुत सी छिपी हुई बातें हैं। वह खोल कर समझ लेनी चाहिए। पहली तो बात यह है कि क्या है शुभ और क्या है अशुभ?
जब तक किसी ने स्वयं को नहीं जाना, तब तक वह यह जान ही नहीं सकता कि क्या है शुभ और क्या है अशुभ?
असंभव है जानना--शुभ क्या है? किस चीज को ठीक कहें? महावीर कहते हैं चींटी न मर जाए! चींटी मर गई तो बहुत अशुभ हो जाएगा! कृष्ण अर्जुन से कहते

हैं, बेफिक्री से मार, क्योंकि कोई मरता ही नहीं! तू मारेगा भी तो भी कोई मरने वाला नहीं! क्या है शुभ?
कृष्ण अर्जुन से कहते हैं, मार। बेफिक्री से मार। कोई चिंता ही मत कर। क्योंकि कभी कोई मरता ही नहीं। आत्मा अमर है। तू तलवार चला। कुछ कटता ही नहीं है। शस्त्र से कटता ही नहीं है कुछ। तू काट, तू भ्रम छोड़ दे कि कोई मरता है। कोई मरता ही नहीं। आत्मा अमर है।
महावीर कहते हैं, फूंक कर पैर रखना, चींटी न दब जाए, हिंसा न हो जाए, अन्यथा पाप हो जाएगा!
क्या है शुभ? महावीर कहते हैं, वह शुभ है! कि कृष्ण कहते हैं, वह शुभ है!
महावीर के मानने वालों ने कृष्ण को नर्क में डाल रखा है, इसी शुभ-अशुभ
की झंझट की वजह से, क्योंकि कृष्ण तो बड़ी अशुभ बात कर रहे हैं। वह कह रहे हैं, काटो!
महाभारत शायद बच भी जाता, अर्जुन अगर भाग जाता और संन्यासी हो जाता। होने की स्थिति पैदा हो गई थी! भागने की तैयारी पूरी थी! लेकिन कृष्ण ने कहाः कहां भाग कर जाएगा?
महावीर को मानने वाले ने कृष्ण को डाल दिया नर्क में। इस कल्प में
नरक से उनका छुटकारा नहीं होगा, क्योंकि उन्हीने इतनी हिंसा करवादी। लेकिन कृष्ण को मानने वाला कहता है, कृष्ण से पूर्ण अवतार कभी भी नहीं हुआ! कौन है शुभ? कौन है अशुभ? नहीं, कर्म की परिधि पर तय ही नहीं किया जा सकता। लेकिन आप कहेंगे कि अगर आत्मा की परिधि पर महावीर पहुंच गए और कृष्ण
भी पहुंच गए तो फिर यह फर्क क्यों है? अगर वे आत्मा में पहुंच गए, होने में पहुंच गए तो फिर यह फर्क क्यों है? जिस दिन आप पहुंचेंगे, उस दिन आप पाएंगे, फर्क नहीं है। वे दोनों एक ही बात को दो तरफ से कह रहे हैं। महावीर कहते हैं, पैर फूंक कर रख कि चींटी न दब जाए। महावीर भी जानते हैं कि कुछ भी नहीं मरेगा, चींटी भी नहीं मरेगी। कुछ मरने वाला नहीं है। आत्मा अमर है, इसे वे भी जानते हैं। फिर वे कहते हैं, मार मत! यह क्यों कहते हैं? वे इसलिए कहते हैं कि मरेगा तो कुछ भी नहीं, लेकिन तेरा यह खयाल कि मैंने मारा, वह बहुत कठिनाई में डाल देगा। मरेगा तो कुछ भी नहीं। सवाल मरने का है ही नहीं। सवाल तेरे इस खयाल का है कि मैंने मार डाला। यह खयाल तुझे दिक्कत में डाल देगा। तुझे तो पता नहीं कि कुछ नहीं मरेगा।
वे एक छोर से बात कर रहे हैं। जिनसे वे बात कर रहे हैं वे उन्हीं लोगों
से बात कर रहे हैं, जो मारने में उत्सुक हैं। वे अर्जुन से बात नहीं कर रहे हैं, जो न मारने में उत्सुक हो। महावीर उनसे बात कर रहे हैं, जो मारने में उत्सुक हैं! जो चाहते हैं कि कोई समझा दे कि कुछ भी नहीं मरता, तो अच्छी तरह मारे। महावीर उनसे बोल रहे हैं, जो मारने में उत्सुक हैं। तो महावीर कहते हैं, फूंक कर पैर रखना, क्योंकि जो तेरी मारने की उत्सुकता है, वह तुझे दिक्कत में डाल देगी। मरेगा कुछ भी नहीं, लेकिन तूने मारा, यह खयाल तेरे लिए उपद्रव का कारण हो जाएगा।
कृष्ण बिल्कुल दूसरे आदमी से बात कर रहे हैं। वे उस आदमी से बात कर रहें हैं, जो न मारने में उत्सुक हो गया है। जो कहता हैं, मैं न मारूंगा। वह क्यों उत्सुक हो गया है? वह कहता है, कि मारने से पाप लग जाएगा!
महावीर जिसको समझा रहे हैं, वह गलत खयाल उसका यह है कि मैंने मारा, मैं मार रहा हूं! यह उसका गलत खयाल है।
अर्जुन का गलत खयाल यह है कि कोई मर जाएगा तो मुझे पाप लग जाएगा! उसका
यह खयाल नहीं है कि मेरे मारने से पाप लग जाएगा। उसका खयाल है, कोई मर जाएगा तो मुझे पाप लग जाएगा! कृष्ण उससे कहते हैं, कोई मरता ही नहीं, तू बेफिक्री से मार।
ये दोनों आदमी एक ही बात कहते हैं! ये दोनों अलग बातें नहीं कहते! लेकिन परिधि पर देखने से ये बातें इतनी अलग हैं, जितनी हो सकती हैं। इनके बीच कोई मेल नहीं हो सकता।
असल में अगर हम एक बिंदु रखें, और बिंदु पर परकार रख कर एक वृत्त खींचें, एक सर्कल बनाएं, सर्कल पर पचास बिंदु बना कर बीच के बिंदु की तरफ

रेखाएं खींचें, तो परिधि पर दो रेखाओं में फासला होगा और जैसे-जैसे केंद्र की तरफ चलने लगेंगी तो फासला कम होगा। और जब दो रेखाएं-जो कि परिधि पर बहुत दूर-दूर थीं, जब केंद्र पर आएंगी तो एक ही बिंदु पर खड़ी हो जाएंगी।
जो लोग बीइंग पर पहुंचे हैं, जिन लोगों ने आत्मा को जाना हो, वहां कोई फर्क नहीं रह जाता। लेकिन परिधि पर बहुत फर्क हैं, और चूंकि सारे धर्म परिधि को देख कर बने हैं, इसलिए धर्मों में फर्क है!
अगर किसी दिन आत्मा को देख कर धर्म का जन्म होगा तो दुनिया में एक ही धर्म हो सकता है, बहुत धर्म नहीं हो सकते।
लेकिन मोहम्मद की परिधि अलग है, महावीर की परिधि अलग है, कृष्ण की परिधि अलग है। होगी ही। हर लहर अलग होगी। एक ही सागर पर उठने वाली भी दो लहरें एक जैसी नहीं होंगी। सब लहरें अलग होंगी। लहरें अलग होंगी ही। लेकिन नीचे लहरों के, एक ही सागर है और वहां हमारा ध्यान नहीं जाता। फिर हम लहरों को पकड़ कर चलना शुरू कर देते हैं! कोई महावीर का आचरण देख कर चलता है तो जैन हो गया! कोई बुद्ध का आचरण देख कर चलता है तो बौद्ध हो गया! कोई कृष्ण का आचरण देख कर चलता है तो हिंदू! कोई जीसस का आचरण देख कर चलता है तो ईसाई! सब आचरण को देख कर चलने वाले लोगों के बनाए हुए धर्म हैं!
सारी दुनिया में कर्मवाद है। कर्म को देखकर हम चल रहे हैं, इसीलिए इतना उपद्रव है। शुभ और अशुभ का निर्णय कैसे करिएगा? कैसे जानिएगा कि क्या शुभ है, और क्या अशुभ? नहीं जान सकते। जिसने अभी अपने को ही नहीं जाना, वह नहीं जान सकता कि शुभ क्या है, अशुभ क्या है? लेकिन कर्मयोग कहता है कि शुभ और अशुभ को देख कर चलो! कौन तय करेगा? कैसे तय करेगा कि क्या शुभ है और क्या अशुभ?
कबीर के घर बहुत लोग इकट्ठे होते और कबीर, जब लोग जाने लगते--सुबह भजन-कीर्तन समाप्त होता, मिलना-जुलना बंद होता--तो कबीर कहते, भोजन करते जाना! कबीर का लड़का परेशान हो गया, क्योंकि कहां से लाए इतना? कभी दो सौ लोग
भी इकट्ठे होते, कभी पांच सौ लोग भी इकट्ठे होते! इन सबको भोजन कहां से करवाएं रोज-रोज? कबीर से उसने बहुत बार कहा कि देखें अब कल ये मत कहना लोगों से जाते वक्त कि भोजन कर लो, क्योंकि मैं कहां से लाऊं इतना? यह कैसे इंतजाम करूं? हम गरीब आदमी हैं, आप भूल क्यों जाते हैं?
कबीर बार-बार भूल जाते! क्योंकि जिसको भीतर की संपत्ति दिख गई हो, उसको गरीबी का खयाल नहीं रह जाता। वह रोज भूल जाता है।
बेटा रोज सांझ गरदन पकड़ लेता कि तुम आदमी कैसे हो! हम गरीब आदमी हैं,
हम भूखे मर रहे हैं। हम कहां से लोगों को खिलादें? कर्ज हुआ जाता है। लोगों से मांग-मांग कर परेशान हो गए। अब गांव में कोई देने को भी तैयार नहीं! कबीर कहते कोशिश करूंगा। वह कोशिश खतम हो जाती। सुबह जब लोग आते कबीर कहते, कहां चले, भोजन तो करते जाओ!
वह जिसको भीतर की संपत्ति दिख गई, उसको बाहर की दरिद्रता को याद रखना मुश्किल हो जाता है। कितनी ही कोशिश, छूट-छूट जाती। और जिसको भीतर की संपदा नहीं मिली, उसको बाहर की कितनी ही संपदा मिल जाए, उससे दरिद्रता नहीं मिटती। वह भीतर का दरिद्र कह देता है कि अभी कुछ नहीं है, अभी कुछ नहीं है। अभी कुछ मिला ही क्या है? अभी तो और मिल जाए! वह भीतर आदमी दरिद्र बना रहता है। बाहर की संपत्ति दरिद्रता नहीं मिटा पाती। इसलिए अक्सर ऐसा होता है, जितनी संपत्ति उतना दरिद्र आदमी, उतना भीतर दीन-हीन!
आखिर एक दिन उसके लड़के ने रात को कबीर को कहा, अब बहुत हो गया, यह अंतिम, अल्टीमेटम जिसको कहें, यह आखिरी, आखिरी निर्णय हो जाना चाहिए, कल से इस घर में मैं नहीं रहूंगा। क्या मैं चोरी करने लगूं? उसने तो क्रोध में कहा था कि कबीर को कुछ बुद्धि आए! लेकिन जो बुद्धि के बाहर चले गए हों, वे बड़े निर्बुद्धि हो जाते हैं। एक तो बुद्धि के नीचे जो रहते हैं, वे भी निर्बुद्धि रहते हैं। बुद्धि के ऊपर जो चले जाते हैं, वे भी निर्बुद्धि हो जाते हैं। दोनों में बड़ा फर्क होता है। लेकिन करीब-करीब एक जैसे हो जाते हैं। एकदम से पहचानना मुश्किल है।
कबीर ने कहाः मूर्ख, तुझे पहले क्यों न सूझा? अरे चोरी करनी थी तो मुझे इतने दिन से परेशान क्यों कर रहा है? कर ले!

लड़का तो बहुत चौंका। उसने कहाः आप यह कह रहे हैं कि चोरी कर लूं! आप यह
कह रहे हैं! शुभ-अशुभ का कोई खयाल नहीं? चोरी अशुभ है। कबीर ने कहाः चोरी अशुभ है! वह आंख बंद करके कुछ सोचने लगे। कहने लगे कुछ समझ में नहीं आता। लड़के ने कहा कि परीक्षा पूरी ही कर लेनी चाहिए। तो उसने कहा, फिर उठिए। मैं ही क्यों चोरी करूं, आप भी साथ चलिए।
कबीर ने कहाः चलता हूं, लेकिन देख ज्यादा सामान मेरे ऊपर मत लाद देना, बुड्ढा आदमी हूं! कबीर पीछे, बेटा आगे-वे चोरी करने गए!
लड़के ने भी बड़ी हिम्मत की। कमाल, उनका लड़का बहुत हिम्मतवर था। उसने कहाः आखिरी क्षण तक देख ही लेना चाहिए--यह आदमी क्या क्या बात कह रहा है, इसको शुभ-अशुभ का भी बोध नहीं है! संध लगाई, दीवार तोड़ डाली। कबीर से कहाः क्या इरादा है?
कबीर ने कहाः घुसो! वह सोचा कि क्या चोरी करनी ही पड़ेगी! लड़का भीतर घुस गया। एक बोरा गेहूं खींच कर लाया। कबीर से कहाः सहायता करिए। कबीर ने सहायता की। लड़के ने कहाः क्या इरादा है--ले चलें घर?
कबीर ने कहाः इतनी मेहनत किसलिए की? लेकिन घर के लोगों को बता आए न? कबीर ने कहाः घर के लोगों को बता आए न!
उस लड़के ने सिर ठोंक लिया। उसने कहाः चोरी कर रहे हैं, कोई घर के लोगों
को बताने की बात है?
कबीर ने कहाः नहीं, यह ठीक नहीं पड़ता। जरा घर के लोगों को कह आओ कि हम चोरी कर रहे हैं! एक गेहूं बोरा ले जा रहे हैं!
तो उस लड़के ने कहाः तो यह कैसी चोरी! और तुम्हें समझ में नहीं आता कि चोरी बुरी चीज है?
कबीर ने कहा कि अब मैं सोचता हूं, जब तुम नहीं कह आए घर के लोगों से कुछ गड़बड़ बात है। लेकिन मुझसे इसलिए भूल हो गई कि बहुत दिन से अपने-पराए का भेद नहीं रहा। मेरी समझ में ही नहीं आया कि चोरी किसकी! चोरी किसकी? कौन करेगा? और किसकी होगी? सभी उसका है। हम भी उसके हैं, वे भी उसके हैं, सामान भी उसका है। सब परमात्मा का है। नहीं-नहीं, लेकिन खबर करके आओ। खबर तो कर दो, क्योंकि बेचारे सुबह खोजें घर में और बोरा न मिले तो तकलीफ में पड़ेंगे। कहां खोजें?
उस लड़के ने कहाः हो गई चोरी। वापस चलिए। ऐसे चोरी नहीं होती। अगर खबर
ही करनी है तो घर वापस चलिए।
यह जो कबीर है--क्या है शुभ? क्या है अशुभ--वह यह कह रहा है कि सब "उसका"। कैसी चोरी! अपने पराए का भेद न रहा। कैसी चोरी! चोरी के लिए अपने- पराए का भेद होना तो जरूरी है।
संपत्ति किसी की है? मेरी नहीं है। जिसको यह बोध है, उसको यह भी बोध होगा कि यह संपत्ति मेरी है किसी की नहीं है। जिसको यह बोध है कि किसी की चोरी न करूं, उसको यह भी बोध होगा कि मेरी कोई चोरी न कर ले। लेकिन एक जगह है, जहां संपत्ति किसी की नहीं--जहां हम ही नहीं रह गए। जहां सब "उसी" का रह गया। वहां क्या होगा, कैसे तय करिएगा? शुभ क्या है, अशुभ क्या है? शुभ और अशुभ का निर्णय परिधि पर नहीं हो सकता, गहरे में होगा।
मैं मानता हूं, कि कबीर का बेटा जब कह रहा था कि चोरी अशुभ है, तब वह इसीलिए कह रहा था, कि संपत्ति की मालकियत को मानता था। अभी अहंकार जिंदा था। और अहंकार अशुभ है, चोरी अशुभ नहीं है। अहंकार ही वजह से चोरी अशुभ मालूम हो रही है।
और कबीर का अहंकार खो गया। उनको पता ही नहीं चलता कौन किसका है? क्या कौन है? यह आदमी अशुभ है? क्या आप कहेंगे कबीर का चोरी करने जाना अशुभ था? मैं नहीं कह सकता। मेरे लिए कहना मुश्किल है, क्योंकि कबीर चोरी को गया ही नहीं। क्योंकि चोरी को तो तभी जाया जा सकता है, जब संपत्ति किसी की हो और अहंकार में हमने जगत को बांटा हो।
कबीर चोरी को गया नहीं। कबीर किसी दूसरी दिशा में यात्रा कर रहा है। बेटा किसी और दिशा में यात्रा कर रहा है। वे दोनों साथ गए ही नहीं! साथ दिखाई पड़े। कर्म की दुनिया में, इसलिए दिक्कत हो जाती है। वे साथ गए ही नहीं। वह कहीं और जा रहा था। वे भगवान के घर ही जा रहे थे। जैसा यह घर है वह

वैसा, घर है। उधर से उठा लाओ! लेकिन घर में जो लोग पहरा देते हैं, उनको खबर कर दो कि हम चोरी करने जा रहे हैं! सामान उठा रहे हैं।
कबीर चोरी करने गया ही नहीं, सिर्फ बेटा ही चोरी करने गया! और बेटा को शुभ और अशुभ का बोध है। और कबीर को बोध नहीं! परिधि पर जो निर्णय करेंगे? कैसे निर्णय करिएगा! अगर हम सारे जगत में नीति के, शुभ अशुभ के भेद देखें तो बहुत हैरान हो जाएंगे। जो यहां शुभ है, वह पचास मील बाद में अशुभ हो सकता है! जो पचास मील दूर अशुभ है, वह यहां शुभ हो सकता है!
मेरे एक प्रोफेसर, पेशावर में प्रोफेसर थे। विभाजन के पहले वे पेशावर थे। एक दिन मैं उनसे बात करता था। तो उन्होंने मुझे कहा कि तुम जो कहते हो शायद--एक घटना मेरे जीवन में घटी--उससे तुम्हारी बात ठीक लगती है।
मैं पेशावर में था और मेरे पास पहली दफे एक पख्तून लड़का ग्रेजुएट हुआ। मैंने ही मेहनत करके उस पख्तून को पढ़ाया। वह पख्तूनों में पहला ग्रेजुएट था, पहला स्नातक था। बड़ी मुश्किल से तो पढ़ पाया। थर्ड क्लास में बड़ी मुश्किल से पास हुआ। लेकिन पख्तूनों में बड़ी खुशी फैल गई! जिस दिन उसके पास होने की खबर आई तो आठ-दस पख्तून सरदार, बुड्ढे-बड़े भोले और सरल लोग, नंगी तलवारें लेकर मेरे पास आए। तो मैं तो डर गया कि यह क्या मामला है! उन्होंने आकर तलवारें मेरे सामने रख दीं और मेरे पैर छुए और कहा कि आपका कोई दुश्मन हो तो नाम बता दें!
मेरे दुश्मन का क्या करिएगा?
उन्होंने कहाः हम गरीब पख्तून और क्या सेवा कर सकते हैं--गर्दन काट कर
ला देंगे! आपने बड़ी कृपा की, हमारा पहला लड़का स्नातक हो गया विश्व में। हम बड़े गरीब लोग हैं, हम और क्या कर सकते हैं? आप देर न करिए, नाम दीजिए। सांझ होने के पहले गर्दन दरवाजे पर लटकेगी!
और वे बड़े भोले लोग हैं, एकदम भोले लोग हैं। भले लोग नहीं हैं, कि हम कहेंगे! कि गर्दन काटने वाले लोग हैं बुरे ही लोग हैं? इतने भोले लोग हैं, वे इतनी सरलता से पैर पकड़ कर कहने लगे उनको कि नहीं नहीं आप कृपा करके नाम बता दीजिए। एकाध नाम बता दीजिए, सांझ होने के पहले गर्दन दरवाजे पर! हम गरीब पख्तून और क्या कर सकते हैं! हम कैसे धन्यवाद दें!
उन्होंने कहाः भई इतनी ही कृपा करना कि कभी मेरी ही गर्दन न कटवा देना। तुम जाओ, कोई हमारा ऐसा दुश्मन नहीं, जिसकी गर्दन कटवानी हो! लेकिन वे बार-बार आते रहे! वे कई बार आए कि आप मालूम होता है, हम पर खुश नहीं? आप नाम तो बता दें। नाम ही भर बताने की जरूरत है, बाकी सब हम कर लेंगे, कुछ देर लगेगी!
वे मुझसे कहते थे, कि उनकी आंखों में देखता हूं तो बड़े सरल लोग हैं। और
वे जो कह रहे हैं कि गर्दन काट लाएंगे, वह बड़ी कठिन बात मालूम पड़ती है! लेकिन पख्तून में गर्दन काटना अशुभ नहीं है, गर्दन कटवा देना अशुभ नहीं है। गर्दन काटने से भागना या कटवाने से भागना अशुभ है!
ऐसी कौमें हैं सारी जमीन पर कि अगर उनके शुभ-अशुभ का निर्णय करने जाएं
तो बहुत हैरान हो जाएंगे कि क्या शुभ है, क्या अशुभ है?
अंग्रेज हिंदुस्तान में आए, तब हिमालय के पास ढेर ऐसे आदिवासी कबीले थे--कि उनके घर में अगर मेहमान हो, तो वे सारी सेवा करेंगे और रात अपनी पत्नी भी दे देंगे! क्योंकि घर मेहमान आया है, उसको पत्नी भी दीजिएगा! कैसा अतिथि-सत्कार हो रहा है यह! तो अपनी पत्नी भी दे देंगे रात को।
बड़े सीधे लोग थे, अंग्रेज उनके घर जाकर ठहरने लगे, क्योंकि उनकी सुंदर पत्नियों ने बहुत आकर्षित किया!
अब पूछने जैसा है कि अशुभ कौन कर रहा है? वे अशुभ कर रहे थे, जो कि इतने भोले थे, कि वे कहते थे कि जब घर में मेहमान आया तो रात उसको पत्नी की याद आए, स्त्री की याद आए तो वह क्या करेगा? तो वह हमारे घर मेहमान हुआ तो हमारी पत्नी मिलनी चाहिए! और पत्नी सरलता से रात उसके पास जाकर सो जाएगी, क्योंकि घर मेहमान आया है--देवता है!
ये गलत कर रहे थे या अशुभ कर रहे थे? या वह आदमी जो सिर्फ इसलिए घर में आकर मेहमान हो गया था कि इसकी औरत पर नजर थी उसकी? इसलिए आज वह घर में मेहमान हो गया!

तो फिर धीरे-धीरे उस कबीले को समझ लानी पड़ी, कबीला चालाक हुआ, कनिंग हुआ, फिर उसने कहा कि यह बात गलत है! मेहमान को पत्नी देना गलत है। यह अशुभ है। लेकिन चालाक हुआ तब। चालाकी अशुभ है? या उसका वह निर्दोष भाव अशुभ था? तय करना मुश्किल है।
परिधि पर कुछ भी तय नहीं होता। परिधि पर कुछ भी तय नहीं हो सकता। लेकिन कर्मवादी कहता है, परिधि पर निर्णय कर लो--यह ठीक और यह गलत! और ठीक डिवीजन कर लो, कंपार्टमेंट बांट दो! दीवाल खड़ी कर दो कि यह हम करेंगे और यह हम न करेंगे! इसलिए कर्मवादी जड़ हो जाता है। जड़ हो जाता है इसलिए कि उसकी जो फ्लेग्जेबिलिटि है व्यक्तित्व की, जो तरलता है, वह खो जाती है। सख्त, यह ठीक और यह गलत--बस वह ऐसा करेगा!
लेकिन जिंदगी बहुत तरल है। उसमें ठीक, जो सुबह ठीक था, वह सांझ गलत हो जाता है! जो सांझ गलत था, वह सुबह ठीक हो जाता है। जो घड़ी भर पहले ठीक था, घड़ी भर बाद गलत हो जाता है। इसलिए सवाल ठीक और गलत तय करने का नहीं है। सवाल ठीक और गलत को हर स्थिति में पहचानने का है। लेकिन वह कौन पहचानेगा? वह बीइंग पहचान सकता है। वह भीतर की आत्मा जाग्रत हो तो पहचान सकती है क्या ठीक, क्या गलत।
और ठीक और गलत की कोई निर्णायक स्थिति नहीं है कि हम लेबल लगा दें कि
यह ठीक और यह गलत। किसी क्षण में अहिंसा ठीक हो सकती है। किसी क्षण में गलत हो सकती है। किसी क्षण में हिंसा ठीक हो सकती है। किसी क्षण में अहिंसा ठीक हो सकती है। लेकिन वह जो कर्मवादी है, वह कहता है, अहिंसा सदा ठीक और हिंसा सदा गलत!
जिंदगी इतनी पथरीली नहीं, जिंदगी बहुत तरल है। जैसे नदी बहती है--कभी बाएं बहती है, कभी दाएं बहने लगती है। कभी इधर जाती है, कभी उधर जाती है। जिंदगी ऐसी ही है। रेल की पटरियों की तरह नहीं कि बस चली जा रही है। इसलिए जिंदगी के मामले में जिसने ऐसे सख्त नियम लिए, वह बहुत मुश्किल में पड़ जाता है।
अगर अहिंसा सदा सही है तो फिर बहुत सी गलत बातें सही हो जाएंगी। अगर अहिंसा सदा सही है तो मेरे ऊपर कोई मुझे गुलाम बनाने आए, और आपको गुलाम बनाने आए तो फिर अहिंसा क्या करेगी? फिर अहिंसा सदा सही है तो गुलामी सही हो जाएगी! लेकिन गुलामी कैसे सही हो सकती है? और गुलाम अहिंसक हो सकता है? जो आत्मा को बेचने को तैयार हो गया, वह अहिंसा को कितने दिन तक बचाएगा? अहिंसा भी बिक जाएगी, कहना मुश्किल है।
एक छोटी सी कहानी मुझे याद आती है।
एक फकीर हुआ है, नसरुद्दीन। उसके राजा ने, उसके गांव के राजा ने तय कर लिया हम अपने राज्य से असत्य को उखाड़ कर फेंक देंगे! उसने फकीर को बुलाया और उससे कहा कि तुमसे मैं सलाह ले लेना चाहता हूं। मैंने तय किया है कि असत्य को मैं उखाड़ कर फेंक दूंगा। फकीर ने कहा, पहले पक्का पता लगा लिया कि असत्य क्या है? क्योंकि असत्य रोज शक्लें बदल लेता है।
उसने कहा, उसीलिए तो आपको बुलाया है कि आप मुझे बता दें कि असत्य क्या है? मैंने यह तय किया है कि कल से राज्य में एक आदमी को रोज सूली पर लटकाऊंगा--चौरस्ते पर राजधानी के। जो झूठ बोलेगा, वह सूली पर लटकेगा, ताकि बाकी लोग देखें, समझ जाएं कि यह हालत है झूठ बोलने वालों की।
उस फकीर ने पूछाः किस जगह सूली बनाई है?
राजा ने कहाः गांव का जो बड़ा द्वार है उस पर।
तो उस फकीर ने कहाः कल सुबह द्वार पर मिलूंगा, वहीं पर मुलाकात होगी। राजा ने कहाः मतलब क्या है? मैं तुमसे पूछने को बुलाया हूं!
उसने कहाः कि वहीं बता देंगे, सूली तैयार रखना!
सूली तैयार रखी गई। सुबह जो फकीर, दरवाजा खुला नगर का तो फकीर पहला प्रवेश किया। अपने गधे पर बैठा हुआ, वह अंदर घुसा।
राजा ने पूछाः कहां जा रहे हो?
उस फकीर ने कहाः सूली पर चढ़ने!
राजा ने कहाः सरासर झूठ बोल रहे हो। तुम्हें कौन सूली पर चढ़ाएगा।

तो उस फकीर ने कहाः अगर झूठ बोल रहा हूं तो सूली पर चढ़ा दो-सूली तैयार है।
उस राजा ने कहाः बड़ी मुश्किल में डाल दिया। अगर मैं तुम्हें सूली पर चढ़ा दूं तो लोग कहेंगे, एक सच बोलने वाले, को सूली पर चढ़ा दिया क्योंकि जो कह रहा था कि सूली पर चढ़ने जा रहा हूं, उसको सूली पर चढ़ा दिया! एक सच बोलने वाले को सूली पर चढ़ा दिया--लोग कहेंगे और अगर तुम्हें मैं छोड़ दूं तो सूली पर नहीं चढ़ोगे, तो झूठ हो जाएगा।
तो उस फकीर ने कहा कि मैं रुका हूं, तुम तय कर लो, कि क्या करना है? अगर
तय हो जाए तो सूली पर चढ़ा दो, अगर तय हो जाए तो छोड़ दो।
उस राजा ने कहाः बहुत मुश्किल में डाल दिया।
उस फकीर ने कहाः जिंदगी सभी को मुश्किल में डाल देती है। उन सभी को, जो जिंदगी में तय कर लेते हैं कि बस यह सच है और यह झूठ है।
जिंदगी बहुत तरल है। परिधि पर तय नहीं हो सकता क्या ठीक है और क्या गलत है? और जो आदमी परिधि पर तय करने में लगेगा, वह नष्ट हो जाएगा। वह ज्यादा से ज्यादा धोखा पैदा कर सकता है नैतिक होने का, लेकिन कभी धार्मिक नहीं हो सकता। उसे जिंदगी में रोज मौके आएंगे, जो मुश्किल में डालते रहेंगे कि क्या करूं, क्या न करूं? फिर धीरे-धीरे वह जिंदगी की तरलता को देखना बंद कर देगा। वह अपने ठोस और सख्त ढांचे में, पैटर्न में जीने लगेगा कि बस यही ठीक है! वह आंख बंद करके वही करता रहेगा! और वह आदमी तो गलत ही होगा, क्योंकि भीतर तो कोई परिवर्तन नहीं हुआ है!
गलत आदमी पर जब ठीक बात जुड़ जाती है, तो ठीक बात भी गलत का साधन बन जाती है।
जैसे कि महावीर को लोगों ने देखा और लोगों ने समझा कि अहिंसा ठीक है।
तो महावीर को मानने वालों ने खेती बंद कर दी! इसलिए जैन खेती नहीं करता रहा। उसने खेती बंद कर दी, क्योंकि खेती में हिंसा मालूम पड़ी। पौधे काटने पड़ेंगे, पौधों में प्राण हैं।
महावीर को एक अनुभव हुआ है पौधों में प्राण हैं। प्राण हैं! महावीर ने
जो जाना है, वह फिर जगदीशचंद्र ने बहुत बार सिद्ध किया विज्ञान से कि पौधों में प्राण है, आत्मा है! अब तो महावीर की बात बहुत वैज्ञानिक कि पौधे में प्राण हैं तो फिर, एक आदमी गेहूं की फसल काटेगा, हजारों पौधे काटेगा तो हजारों प्राण कट जाएंगे, हजारों की हत्याएं हो जाएंगी। तो जैनियों ने खेती बंद कर दी!
लेकिन खेती बंद करने से क्या हो सकता था। कोई तो खेती करेगा, गेहूं तो खाना पड़ेगा। मैं खेती न करूं तो आप खेती करेंगे। गेहूं मैं खाऊंगा, हिंसा आपको लगेगी! बहुत मजेदार नियम हुआ--गेहूं मैं खाऊंगा और हिंसा आपको लगेगी! तो खेती दूसरों पर छोड़ दी! लेकिन वह हिंसक आदमी तो भीतर हिंसक रहा!
यह बड़े मजे की बात है कि किसान कम हिंसक होते हैं। कम हिंसक इसलिए होते हैं कि काटने-पीटने में, काटने-पीटने की बहुत सी वृत्ति तृप्त हो जाती है। एक आदमी लकड़ी काट रहा है, वृक्ष काट रहा है, तलवार चला रहा है, तो... । कुल्हाड़ी चला रहा है तो जिस आदमी ने सुबह तीन घंटे वृक्ष पर कुल्हाड़ी मारी है, वह आदमी को किसी की गरदन में कुल्हाड़ी मारने में रस नहीं पाएगा। उसकी तृप्ति हो गई--काटने की, मारने की।
किसान कम हिंसक होता है। लेकिन जब किसानी बंद कर दी महावीर के मानने वालों ने--और लड़ सकता नहीं था युद्ध के मैदान में, इसलिए क्षत्रिय तो नहीं हो सकता था। और क्षत्रिय ही थे मानने वाले! महावीर तो खुद क्षत्रिय थे! मानने वाले सब क्षत्रिय थे, तो वे लड़ भी नहीं सकते थे। उन्होंने युद्ध भी बंद कर दिया, किसानी भी बंद कर दी! तो अब दो ही विकल्प थे--या बनिए हो जाएं या भंगी हो जाएं। भंगी होना नहीं चाहा उन्होंने, तो वे बनिए हो गए!
लेकिन ध्यान रहे, बनिया बहुत हिंसक हो सकता है। और हुआ। इसलिए उसने बहुत संपत्ति इकट्ठी कर ली। संपत्ति, बिना हिंसा के इकट्ठी नहीं हो सकती! लेकिन तब उसने काटना-पीटना बंद कर दिया। उसने फिर सूक्ष्म तरकीबें काटने- पीटने की निकालीं! कि एक आदमी की गर्दन मत काटो, जेब काटो! जेब काटने से गर्दन कट जाती है! बल्कि एक दफा गर्दन काटना शायद ज्यादा दयापूर्ण हो, जेब

काटना ज्यादा क्रूरतापूर्ण हो जाता है। क्योंकि गर्दन कट जाए तो एक दफा निपट गया मामला। जेब कट जाए तो गर्दन भी रहती है! जेब भी कट गई और जिंदा भी रहना पड़ता है! और मरे हुए जिंदा रहना पड़ता है!
तो वह जिन लोगों ने गर्दन काटने से अपने को परिधि पर रोक लिया, वह फिर उन्होंने काटने की नई तरकीबें ईजाद कीं! इसलिए हिंदुस्तान में महावीर के मानने वालों के पास सबसे ज्यादा पैसा इकट्ठा हो गया। उसका कारण था कि उनकी सारी हिंसा कनसनट्रेटिड हो गई! उनकी सारी हिंसा सब तरफ से रुक गई। लड़ना, हिंसा सब तरफ से रुक गई। एक ही दिशा रह गई--पैसा! तो पैसे पर उन्होंने पूरी हिंसा कर दी! पैसा इकट्ठा कर गए।
बहुत थोड़ी संख्या है। पच्चीस लाख से ज्यादा नहीं होगी। लेकिन संपत्ति बहुत ज्यादा है! यह संपत्ति कैसे आई? अगर भीतर से यह बोध आया होता, अगर यह प्राणों में यह बात खिली होती तो यह असंभव था कि यह नई तरह की हिंसा विकसित होती। लेकिन भीतर तो बोध नहीं आया। यह किसी एक की बात नहीं है, सबकी ही बात है। सब तरफ यही बात है।
मैंने सुना है, एक आदमी, एक पादरी है जीसस का। उसने बाइबिल में पढ़ा है
कि अगर दुश्मन एक गाल पर चांटा मारे तो दूसरा गाल सामने कर दो। दुश्मन किसके नहीं हैं? एक दुश्मन ने उसको चांटा मारा। और दुश्मन ने चांटा इसलिए मारा कि दुश्मन ने उसी दिन चर्च में उसका भाषण सुना था। और चर्च के भाषण में उसने कहा था कि जीसस कहते हैं कि जो तुम्हारे बाएं गाल पर चांटा मारे उस पर दायां कर दो!
वह चर्च के बाहर पादरी निकला, दुश्मन ने उसके बाएं गाल पर जोर से चांटा मारा! भीड़ इकट्ठी थी, पादरी एकदम से गड़बड़ भी नहीं कर सका, क्योंकि अभी कह कर चर्च के भीतर से आया था कि दायां गाल सामने कर दो तो पादरी ने दायां गाल सामने कर दिया! उसने उस पर भी एक करारा चांटा मारा। तब पादरी ने उठा कर लकड़ी, उसका सिर फोड़ दिया! तो उस आदमी ने कहा, यह तुम क्या कर रहे हो? तो उस ने कहा जीसस ने कहा है बाएं गाल पर कोई मारे तो दायां कर दो। लेकिन दाएं पर कोई मारे तो कुछ भी नहीं कहा है! दाएं पर कोई मारे तो निर्णय फिर हम करेंगे! क्योंकि आगे कुछ लिखा हुआ नहीं है, इसके आगे। तुम बाएं को मार कर चले गए होते तो बात खत्म हो गई होती।
तो फिर जीसस भी क्या करते? क्या कर सकते हैं? उसने कहा, दायां और बायां दो ही तो होते हैं। तीसरा होता तो हम ठीक से निपटारा कर लेते। हम कौन सा गाल करें आपके सामने! एक मारा दूसरा कर दिया, तीसरा तो है नहीं! अब तो तीसरा आपके पास है।
होता यह है, होने वाला ही यह है! परिधि पर जो निर्णय होंगे, वे ऐसे ही होंगे। कर्म से जो नीति और धर्म पैदा हुआ, वह परिधि पर पैदा हुआ है। लेकिन क्या करें? हमारी तकलीफ यह है कि परिधि हमें दिखाई पड़ती है। क्या करें, क्या न करें--वही हमारे सवाल हैं।
मेरी अपनी समझ है कि करने की बात की मत फिकर करें। इसकी फिकर करें कि करने वाला कौन। वह कौन है भीतर, जो बाएं गाल की तरह दायां गाल करता है? वह कौन है, जो हाथ उठा कर तीसरे गाल पर मारता है? वह कौन है, जो खेत में हिंसा करता है? वह कौन है, जो फिर दुकान पर बैठ कर गर्दन काटता है? वह कौन है भीतर? करने वाला कौन है? कर्म नहीं, करने वाला कौन है--इसकी तलाश। कर्ता कौन है--इसकी तलाश।
जब मैं उठता हूं तो उठने की फिकर छोड़ दें। उठता कौन है? जब मैं भोजन करता हूं तो इसकी फिकर छोड़ दें कि क्या भोजन करता हूं? इसका सवाल है कि भोजन करता कौन है? जब मैं बोल रहा हूं तो यह सवाल महत्वपूर्ण नहीं है कि मैं क्या बोल रहा हूं? सवाल महत्वपूर्ण यह है कौन बोल रहा है? कौन है भीतर? प्रत्येक कर्म के भीतर कौन है? हर कर्म के भीतर कौन है?
और ध्यान रहे, कर्म के भीतर जो छिपा है, वह बिल्कुल अकर्म है। वह कर्ममुक्त है। और तभी कर्म के भीतर हो सकता है।
बैलगाड़ी का चाक चलता है। चाक चलता है, एक कील बीच में खड़ी रहती है, वह नहीं चलती! उसी कील पर चाक चलता है!

कर्म का जो चाक है, वह अकर्म आत्मा पर चलता है! नहीं तो चल नहीं सकता। कर्म के चलने के लिए अकर्म का होना जरूरी है केंद्र में।
भीतर उस केंद्र को पकड़ने की कोशिश करें। चाक नहीं, कील। कर्म नहीं, अकर्म। करना नहीं, होना। वह मैं कौन हूं, जो उठते वक्त उठता है, चलते वक्त चलता है, खाते वक्त खाता है, बोलते वक्त बोलता है, चुप होते वक्त चुप हो जाता है?
और अगर इसकी थोड़ी सी फिकर की--आंख बंद कर, आंख खोल कर, इसे थोड़ा खोजा तो
एक अदभुत अनुभव आपको उपलब्ध होगा। और वह यह कि जब आप उठते हैं, तब भी आपके भीतर कोई है, जो उठता ही नहीं। जब आप चलते हैं, तब कोई आपके भीतर है, जो चलता ही नहीं। जब आप भोजन करते हैं, तब कोई आपके भीतर है, जो भोजन करता ही नहीं। जब आप बोलते हैं, तब भी कोई आपके भीतर निरंतर अबोला है। जब आप जीते हैं, तब भी कोई आपके भीतर जीवन के बिल्कुल पार खड़ा है। जब आप मरते हैं, तब भी कोई आपके भीतर नहीं मरता है।
आपके सारे कर्मों के भीतर बिल्कुल अकर्म में ठहरा हुआ एक बिंदु है।
वही बिंदु बीइंग, वही बिंदु आत्मा। उस बिंदु की पहचान करनी जरूरी है। कर्मयोग नहीं, अकर्म। वह जो अकर्ता, सब कर्म के बीच में खड़ा है।
रास्ते पर चल रहे हैं, जरा भीतर झांक कर पता लगाएं कि कोई है भीतर, जो
चल रहा है? तो बहुत हैरान हो जाएंगे बाहर कोई चल रहा है और भीतर कोई भी नहीं चल रहा है! भीतर सन्नाटा है। भीतर कभी कोई चला ही नहीं!
जन्म से लेकर बूढ़े हो जाएंगे आप--जवान होंगे, बच्चे होंगे, बीमार होंगे, स्वस्थ होंगे, बूढ़े होंगे, जन्मेंगे, मरेंगे। और भीतर कोई है, जो न जन्मता है, न बूढ़ा होता है, न जवान होता है; न बीमार होता है, न स्वस्थ होता है, न मरता है!
वह जो भीतर का बिंदु है, और जो सारी लहरों के भीतर शांत सागर है, उसकी पहचान एक क्षण को भी हो जाए तो जीवन दूसरा हो जाता है। फिर दुबारा भूल असंभव है--बिल्कुल असंभव।
इन चार दिनों में मैंने तीन बातें कहने की कोशिश की--ज्ञान नहीं, भीतर
वह जो ज्ञान नहीं है, ज्ञाता है। भक्ति नहीं, भाव नहीं--भीतर वह, जहां कोई भाव नहीं, सब निर्भाव है। कर्म नहीं--भीतर जहां कोई कर्म नहीं, सब अकर्म है।
निर्विचार, निर्भाव, अकर्म--अगर ये तीन बातें एक सेकेंड में इकट्ठी घट जाएं, एक साथ। तो एक सेकेंड में आपके जीवन में वह बिंदु आ जाएगा--बायलिंग पॉइंट, जहां पानी भाप हो जाता है।
मनुष्य की जिंदगी में भी वह बिंदु है, जो इन तीन की जोड़ से फलित होता है। जहां मनुष्य वाष्पीभूत हो जाता है। जहां पानी नहीं रह जाता, भाप रह जाती है। जहां हम नहीं रह जाते, परमात्मा रह जाता है। हम तो उड़ जाते हैं, एवोपरेट हो जाते हैं। "हम" तो फिर पाए ही नहीं जाते। फिर जो पाया जाता है वह--परमात्मा।
न तो ज्ञान ले जाएगा, न भक्ति ले जाएगी, न कर्म ले जाएगा। ज्ञान, भक्ति, कर्म तीनों मन के ही खेल हैं।
इन तीनों के पार जो जाएगा--वही अ-मन, नो-माइंड वही आत्मा, वही परमशक्ति, उसकी अनुभूति ही ले जाती है।
तब मुझसे मत पूछें कि मार्ग क्या है? सब मार्ग मन के हैं। मार्ग छोड़ें, क्योंकि मन छोड़ना है।
कर्म छोड़ें, वह मन की बाहरी परिधि है। विचार छोड़ें, वह मन के बीच की परिधि है। भाव छोड़ें, वह मन की आखिरी परिधि है। तीनों परिधि को एक साथ छोड़ें।
और उसे जान लें, जो तीनों के पार है, दि बियांड। वह जो सदा पीछे खड़ा है, पार खड़ा है, उसे जानते ही वह सब मिल जाता है, जो मिलने योग्य है। उसे जानते ही वह सब जान लिया जाता है, जो जानने योग्य है। उसे मिलने के बाद, मिलने को कुछ शेष नहीं रह जाता। उसे पाने के बाद, कुछ पाने को शेष नहीं रह जाता।
सब शास्त्र जिसके लिए रोते हैं, चिल्लाते हैं! सब ज्ञानी जिसकी तरफ इशारे उठाते हैं और इशारे नहीं हो पाते! सब शब्द जिसे कहते हैं और नहीं कह

पाते। सब आंखें जिसे तलाशती हैं और नहीं देख पातीं! और सब हाथ जिसको टटोलते हैं और नहीं पकड़ पाते हैं! वह इन तीनों के पार सदा मौजूद है। इन तीनों से जरा-सा द्वार खुल जाए और वह उपलब्ध ही है।
मार्ग नहीं है--क्योंकि वह दूर नहीं है। वह निकट है, निकटतम है, निकट
से भी निकटतम है। वही है।
मार्ग नहीं है, क्योंकि वह वहां नहीं है--यहां है।
मार्ग नहीं है-क्योंकि वह कल नहीं है, अभी है--हियर एण्ड नाउ, अभी और यहीं।
इसलिए मार्ग में मत भटकें। सब मार्ग भटकाते हैं।
सब मार्ग छोड़ दें। खड़े हो जाएं, एक सेकेंड को ही सिर्फ। खड़े होने का प्रयास करते रहें।
भाव का, विचार का, कर्म का--तीनों के ऊपर उठने का प्रयास करते रहें, करते रहें, करते रहें। आपके करने से ऐसा नहीं होगा कि धीरे-धीरे आप उठते जाएंगे। ना, करते रहें। नहीं ऊठेंगे, तब तक नहीं उठेंगे। लेकिन करते-करते, करते-करते कभी वह टर्निंग पॉइंट आ जाएगा कि तीनों चीजें एक सेकेंड को ठहर जाएंगी और आप अचानक पाएंगे कि आप उठ गए।
निन्यानबे डिग्री तक भी पानी भाप नहीं बनता। बस कुनकुना गर्म होता है। गर्म होता रहता है, होता रहता है--अट्ठानबे पर भी गर्म, संतानबे पर भी गर्म, नब्बे पर भी गर्म, साढ़े निन्यानबे पर भी गर्म, निन्यानबे पर भी गर्म, गर्म ही होता रहता है। बस ठीक सौ डिग्री पर पहुंचा कि एक सेकेंड में सब बदल जाता है! पानी नदारद, पानी गया, भाप हो गई!
ठीक ऐसे ही करते रहें, करते रहें। भाव के बाहर, विचार के बाहर, कर्म के बाहर--खोजते रहें, खोजते रहें। अनजान है वह क्षण, कब आ जाए। किसी भी दिन अचानक आप पाएंगे, सौ डिग्री पूरी हो गई!
और अभी तक कोई थर्मामीटर नहीं है कि बाहर से बताया जा सके कि आपकी सौ डिग्री पूरी हो गई। नहीं, आगे भी आशा नहीं है कि कोई थर्मामीटर हो सके। आपको भी पता नहीं है, मुझे भी पता नहीं है, किसी को भी पता नहीं है कि कब किस आदमी की सौ डिग्री पूरी हो जाएं? किस क्षण में? और जिस क्षण पूरी हो जाएंगी, उसी क्षण आप खो जाएंगे। और जो हो जाएगा, वही सत्य है, वही परमात्मा है।
मनुष्य परमात्मा से नहीं मिल पाता। पानी कभी भाप से मिल पाता है? पानी कैसे भाप से मिलेगा? पानी जब मिटेगा, तब भाप होगा। इसलिए पानी कभी भाप से नहीं मिलता।
आदमी कभी परमात्मा से नहीं मिलता। आदमी तो भाप हो जाता है, मिट जाता है, तब जो रह जाता है, वह परमात्मा है।
मिटें ताकि पा सकें, खो जाएं ताकि खोज सकें।
बीज मिटता है तो वृक्ष हो जाता है, बूंद मिटती है तो सागर हो जाती है।

मेरी इन बातों को इतनी शांति और प्रेम से सुना, उससे अनुगृहीत हूं। और अंत में सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।